युगे-युगे क्रान्ति

एक मौलिक नाटक

पात्र

सूत्रधार
देवीप्रसाद
रामकली
कल्याणसिंह
प्यारेलाल
पंडितजी
कलावती
वाहर का व्यक्ति
भीतर का व्यक्ति
शारदा
सार्जेण्ट
एक व्यक्ति
दूसरा व्यक्ति
विमल
चन्द्रकिशोर
प्रदीप
जैनेट
सुरेखा
अनिरुद्ध
रिता
अन्विता
स्त्री

इसके अतिरिक्त पुरुषों और स्त्रियों की भीड़

नोट—शुरू में जो चार पुरुष और दो नारियां आती हैं, वे वही पात्र हैं जो वाद में नाटक में अलग-अलग नामों से भाग लेते हैं।

(सुविधानुसार प्रतीकात्मक मंच तैयार किया जा सकता है। पृष्ठभूमि मे एक गलियारा है। उसीके साथ बाईं ओर के आधे मंच को घेरता हुआ एक विशाल द्वार बना हुआ है। उसके ऊपर एक चक्र है। उस द्वार से होकर अन्दर से आने-जाने का मार्ग है। दाहिनी ओर बाहर जाने के लिए मार्ग बना हुआ है। पीछे का आधा मच कुछ उठा हुआ है। शेप भाग नीचा है। इसके दाहिनी ओर वाला मार्ग भी बाहर जाता है। जब परदा उठता है तो एक व्यक्ति अग्र भाग में घूमता हुआ नज़र आता है। वह बहुत व्यग्र हो रहा है। एक-दो बार ऊपर जाकर द्वार से भीतर की ओर झांकता है। फिर घड़ी देखता है और सहसा दर्शकों की ओर मुह करके बोल उठता है।)

सूत्रधार: देख लीजिए आधा घंटा होने को है, अभी तक कोई नहीं आया। ये आजकल के लोग ! अपना

दायित्व तो जैसे कोई समझता ही नहीं। ये लोग जीवन को क्या समझेंगे। क्या बदलेंगे मूल्यों को। अगर पूर्वाभ्यास ठीक नहीं होगा तो नाटक क्या खाक सफल होगा।

(फिर व्यग्रता से घूमने लगता है। एक क्षण बाद दाहिनी ओर से एक अधेड़ व्यक्ति मंच पर प्रवेश करता है। ढीली-ढाली कोट-पतलून पहने किसी चिन्ता में ग्रस्त थका-थका-सा लेकिन बाहर से यही दिखाने का प्रयत्न करता है कि वह पूर्णरूप से चेतन है। उसे देखते ही सूत्रधार तेज़ी से उसके पास आता है।)

सूत्रधार : जनाब अब तशरीफ लाए हैं। इतनी देर कहां रहे।

देवीप्रसाद : (एक क्षण हतप्रभ रहकर) इतनी देर कहां रहा? समझा नहीं आप क्या कह रहे हैं? मैं तो आपको जानता ही नहीं। आप कैसे जानते हैं कि मैं इधर आनेवाला था? मैं तो अचानक ही आ निकला। आप शायद किसी और का इन्तज़ार कर रहे थे। देखिए, मैं वह नहीं हूं। मेरा नाम देवीप्रसाद है। मेरी लड़की का नाम ज्योत्स्ना है। उसने प्रथम श्रेणी में एम० ए० पास किया है…

सूत्रधार : (तेज़ी से) मैं यह सब नहीं सुनना चाहता। तुम कोई भी हो सकते हो। तुम्हारी बेटी का

नाम कुछ भी हो सकता है। मैं तो केवल इतना ही जानना चाहता हूं कि क्या तुम मेरे नाटक के पात्र नहीं हो ?

देवीप्रसाद : (ठठाकर हंसता है) नाटक ? क्या यहां कोई नाटक होने वाला है ? आप शायद सूत्रधार हैं। लेकिन आप अपने पात्रों को भी नहीं पहचानते।

सूत्रधार : श्रीमानजी, यह नाटक साधारण नाटक नहीं है। इसके पात्र भी निश्चित नहीं हैं। आप भी इस नाटक के पात्र हो सकते हैं।

देवीप्रसाद : (चकित होकर) मैं भी इस नाटक का पात्र हो सकता हूं ? क्या कहते हैं आप ? मैंने तो कभी नाटक में काम ही नहीं किया।

सूत्रधार : तो अब कर सकते हैं। मेरा नाटक जीवन से सम्बन्ध रखता है। जो व्यक्ति भी जीता है, वही इसका पात्र हो सकता है। मैं आपको भी इसमें शामिल होने की दावत देता हू।

देवीप्रसाद : वाह ! यह खूब रही, मान न मान मैं तेरा मेह-मान। जी नहीं, मैं आपकी कोई भी सहायता नहीं कर सकता।

सूत्रधार . आप सब कुछ कर सकते हैं। और मैं कहता हूं आप कर भी रहे हैं। जरा यहीं ठहरिए। शायद मेरे पात्र आने शुरू हो गए हैं। बात यह है कि

मैं क्रान्ति की खोज में निकला हूं और उसे मैं अपने नाटक के पात्रों के माध्यम से खोजना चाहता हूं, (हंसकर) उन सबका दावा है कि उनमें से प्रत्येक क्रान्तिकारी है लेकिन'''लो, वे आ गए।

(इसी समय बड़े द्वार पर प्रकाश तेज होता है और उससे होकर पांच व्यक्ति यंत्रवत् एक पंक्ति में आकर मंच पर खड़े हो जाते हैं। वे सभी युवा हैं। उनकी पोशाक अलग-अलग है। पहला व्यक्ति सन् १८७५ के आसपास के युग का प्रतिनिधित्व करता है, दूसरा १९०१ का, तीसरा १९२०-२१ का, चौथा १९४२ और पांचवां अति आधुनिक युग का प्रतिनिधि है।)

देवीप्रसाद : अरे, यह क्या ? ये व्यक्ति इस प्रकार लाइन में आकर क्यों खड़े हो गए ? पोशाक अलग-अलग क्यों है ? और ये इतने उत्तेजित क्यों हो रहे हैं ?

सूत्रधार : (उंगली से चुप रहने का इशारा करते हुए) श-श-श, आइए, हम दर्शक-दीर्घा में चलें और सुनें कि ये क्या कहते हैं।

(कहते-कहते सूत्रधार उस व्यक्ति को पीछे खींचकर ले जाता है। एक क्षण बाद लाइन में खड़ा पहला व्यक्ति उत्तेजित भाव से बोलने लगता है।)

पहला पुरुष : मैं कहता हूं, तुम लोग जानते तक नहीं। मैं

जानता हूं, क्रान्ति क्या होती है। क्रान्ति मैंने की थी।

दूसरा पुरुष : (क्रुद्ध होकर) तुमने क्रान्ति की थी? नहीं, तुम तो प्रतिक्रियावादी थे। क्रान्ति तो मैंने की थी।

पहली नारी : (सहसा बीच में टोककर) ठहरो, तुम भी प्रतिक्रियावादी थे। वह मैं ही थी जिसने पहली बार क्रान्ति का अर्थ समझा और घर की चारदीवारी तोड़कर उसका स्वर-घोष किया।

तीसरा पुरुष : (मुस्कराकर) जी नहीं, तुम भी उनसे अलग नहीं हो। तुमने क्रान्ति का गलत अर्थ किया। उसे सही रूप में केवल मैं ही समझ सका। मैंने ही उसे सही अर्थ दिए। केवल मैंने।

दूसरी नारी }
चौथा पुरुष } : (एक साथ ठठाकर हंसते हैं) तुमने क्रान्ति को सही अर्थ दिए? नहीं-नहीं, यह तुम्हारा मिथ्या दम्भ है। असल में तुममें से कोई भी क्रान्तिकारी नहीं था। जब हमें होश आया तब भी तुम हमारे कंधों पर सवार थे। लेकिन हमने तुम्हें उतार फेंका। क्योंकि बिना परम्परा से मुक्ति पाए क्रान्ति का सही अर्थ नहीं समझा जा सकता। हमने इतिहास को नया मोड़ दिया

क्योंकि इतिहास को लीक से निकाले विना क्रान्ति अर्थहीन है। क्रान्ति हमने की है। हम वास्तव में पहले क्रान्तिकारी हैं।

(पृष्ठभूमि में आरोही संगीत उभरता है। स्वर एक-दूसरे में उलझ जाते हैं। हरेक पात्र एक-दूसरे की ओर इंगित करता हुआ अत्यन्त उत्तेजित स्वर में बोलता है।)

पहला पुरुष : नहीं, क्रान्तिकारी मैं हूं। तुम सव संस्कृति के शत्रु हो।

दूसरा पुरुष : नहीं, तुम प्रतिक्रियावादी हो। क्रान्तिकारी मैं हूं, (दिशा वदलकर) संस्कृति के शत्रु हैं मेरे वाद आने वाले ये लोग।

पहली नारी : नहीं-नहीं, हम संस्कृति के शत्रु नहीं हैं। न तुम क्रान्तिकारी हो। तुम विशुद्ध प्रतिक्रियावादी हो। क्रान्तिकारी मैं हूं, (दिशा-परिवर्तन) संस्कृति की शत्रु है मेरी संतान।

तीसरा पुरुष : नहीं-नहीं-नहीं, तुम्हारा स्वर भी प्रतिक्रियावादी स्वर है। मैं संस्कृति का शत्रु नहीं हो सकता। मैं उसे नया रूप देने वाला क्रान्तिकारी हूं, (दिशा वदलकर) और दिशा-भ्रष्ट हैं ये लोग जो मेरे वाद आए हैं।

दूसरी नारी, चौथा पुरुष : (एक साथ व्यंग्य से) आपस में संघर्ष करने

वालो, तुम सभी प्रतिक्रियावादी हो। परम्पराओं के गुलाम, चुके हुए व्यक्ति। तुम क्रांति कर ही नहीं सकते। यह अधिकार केवल हमारी पीढ़ी को मिला है।

(सहसा सब उत्तेजित हो उठते हैं। सभी स्वर एक-दूसरे में उलझ जाते हैं। संगीत तीव्र होता है। प्रकाश धीरे-धीरे उस ओर से हटकर मंच के दाहिनी ओर आ जाता है। स्वरों के शान्त होते-होते सूत्रधार और देवीप्रसाद धीरे-धीरे मंच पर आते हैं।)

देवीप्रसाद : (चकित स्वर) यह सब क्या है। यह कैसा नाटक है और यह लोग कौन हैं।

सूत्रधार : (हंसकर) श्रीमानजी, अभी तो नाटक आरम्भ ही नहीं हुआ। यह तो मात्र प्रवेशक का पूर्वाभ्यास है। और ये सब हैं नाटक के पात्र। मैंने कहा था न कि मैं क्रान्ति की तलाश में हूं।

देवीप्रसाद : क्रान्ति की तलाश? क्रान्ति भी क्या कोई जिन्स है जिसे कहीं छिपाकर रखा जा सकता है?

सूत्रधार : श्रीमानजी! जैसे युद्ध मनुष्य के मन में पैदा होते हैं, वैसे ही क्रान्ति भी मनुष्य के अन्तर में उपजती है। मैं इन पात्रों के माध्यम से उसीकी खोज करना चाहता हूं। तुमने सुनी इनकी बातें। ये सब अपने को क्रान्तिकारी कहते हैं। लेकिन अपने पुरखों की दृष्टि में ये संस्कृति और सभ्यता

के शत्रु हैं और दिशा-भ्रष्ट हैं। उनकी सन्त
उन्हें प्रतिक्रियावादी और चुके हुए व्यक्ति स-
भती है। (देवीप्रसाद कुछ कहने की चेष्
करता है। सूत्रधार उसे हाथ से रुकने का इशा
करता है) ना-ना, अभी नहीं। मैं तुम्हें इनक
कहानी सुनाता हूं। पहले ही पात्र को लो
जानते हो उसने क्या क्रान्ति की? लगभग ए
सदी पूर्व सन् १८७५ के आसपास की बात है
तब इसने अपनी पत्नी का दिन में मुंह देखा था

देवीप्रसाद : (पहले हतप्रभ, फिर ज़ोर से ठहाका लगाकर
क्यों मज़ाक करते हो सूत्रधारजी। क्या क
अपनी पत्नी का मुंह देखना भी पाप समभ
जाता रहा है?

सूत्रधार : जी हां। मैं आपको उसी युग में ले चलता हूं
अभी मंच पर उसी युग का दृश्य दिखा
जाएगा। आइए हम लोग दर्शक-दीर्घा में चलें
(दोनों बाहर चले जाते हैं। प्रकाश वहां से हटकर पृ
भाग में चला जाता है। तभी बड़े द्वार से होकर
युवक और एक युवती प्रवेश करते हैं। दोनों १८
के आसपास की वेशभूषा में हैं। स्त्री लहंगा और ओढ़
पहेन हुए है। उसने घूंघट निकाल रखा है। पुरुष धो
कुर्ता और दुपल्ली टोपी पहने हुए है। उनके आते
प्रकाश इतना धीमा पड़ जाता है कि दर्शक किसी

का मुंह नहीं देखा करते। दिन में उनके पास नहीं आते। यह बेशर्मी और बेअदबी है।

कल्याणसिंह : इसमें बेशर्मी और बेअदबी की क्या बात है? क्या तुम मेरी घरवाली नहीं हो? क्या दस आदमियों के सामने अग्नि-देवता को साक्षी करके तुमने मेरे साथ फेरे नहीं लिए? क्या तुम मुझे प्यार नहीं करतीं?

रामकली : छी-छी, कैसी बातें करते हो। यह सब हुआ था तभी तो तुम्हारे घर आई हूं। रही प्यार की बात, सो वह भी क्या जताने की चीज़ है? प्यार जताने का काम तो कोठेवालियां किया करती हैं। इसीलिए मर्द उनका मुंह देखते हैं, अपनी घरवाली का नहीं।

कल्याणसिंह : (क्रुद्ध होकर) लेकिन मैं इस बात को नहीं मानता।

रामकली : (शरारत से) न मानो···

कल्याणसिंह : (और भी तेज़ होकर) हां, मैं नहीं मानूंगा। मैं तुम्हारा मुंह देखूंगा। भला कोई बात है!

रामकली : हाय दैया, कैसी बातें करते हो। ज़रा धीरे-धीरे बोलो। दीवारों के भी कान होते हैं।

कल्याणसिंह : ज़रूर होते हैं। मैं तो यही चाहता हूं कि कोई सुने तो। तुम्हें मालूम नहीं कि पुराने ज़माने में

मर्द और औरत दोनों जवान होकर अपनी खुशी से शादी किया करते थे।

रामकली : हाय-हाय, यह फिरंगियों वाली बातें आपने कहा से सीख ली। कही आप उस नगे साधू के पास तो नही जाने लगे जो जोर-जोर से बोलकर कोलाहल करता है और मूर्ति की पूजा करने को पाप बताता है। कहता है—औरतों और भगी-चमारों को पढाना चाहिए।

कल्याणसिंह : वह बहुत पहुचा हुआ योगी है। मैंने उसके दर्शन किए हैं। उसके चेहरे पर तेज है और उसकी आखो में ऐसी रोशनी है कि देखनेवाले की आंखें उसपर से हटती ही नही। निडर तो वह इतना है कि लाट साहब तक से नही घबराता। लोगों ने उसपर पत्थर बरसाए, नदी मे फेंका, जहर दिया लेकिन उसका बाल भी बाका नही हुआ। ऐसा जादूगर है वह। हा, उसकी बहुत-सी बातें मेरी समझ में भी नही आती। पर एक बात मैं बहुत अच्छी तरह समझ गया हूं।

रामकली : कौन-सी बात?

कल्याणसिंह : यही कि पति-पत्नी का रिश्ता क्या है और वह दोनों एक दूसरे के लिए क्या कर सकते हैं। किसी हद तक मैं उसकी यह बात भी मानता

हूं कि परदा करना पाप है। भला कोई बात है, औरत है कि गुड़िया। बाहर जाते समय परदा करे तो कुछ समझ में भी आता है। घर में रह-कर घरवाली घरवाले से परदा करे, यह मैं कभी नहीं मान सकता। मैं यह भी नहीं मान सकता कि अगर मैं तुम्हारा मुंह देख लूंगा तो पाप होगा। (प्यार से) सच कहता हूं, जब-जब मैं तुम्हें छूता हूं तो ऐसा लगता है जैसे तुम बहुत खूब-सूरत हो। मैं उस खूबसूरती को अपनी आंखों से सूरज की रोशनी में अच्छी तरह देखना चाहता हूं।

रामकली : (घबराकर) ना-ना, ऐसी बात मत कहो, मुझे डर लगता है। मैं हाथ जोड़ती हूं, उस साधू के पास मत जाया करो। भला कोई बात है कि मुझे छूने से तुम जान जाते हो कि मैं खूबसूरत हूं। क्या उस योगी ने तुम्हें कोई मंतर सिखा दिया है?

कल्याणसिंह : वह कोई मन्तर नहीं सिखाता। वह तो जादू-टोने और मन्तर का पक्का विरोधी है।

रामकली : फिर तुम कैसे जान जाते हो कि मैं खूबसूरत हूं।

कल्याणसिंह : यह तो खुद मुझे भी पता नहीं। शायद मन की भी आंखें होती हैं। अच्छा, एक बात बताओ।

रामकली · पूछो।

कल्याणसिंह : सच-सच बताना, तुम्हारा मन नहीं करता कि तुम मुझे देखो? बोलो ना। जवाब क्यों नही देती। इसका मतलब है कि तुम्हारा मन भी करता है। करना भी चाहिए।

रामकली : (झिझकते हुए) करता तो है लेकिन मन तो बहुत-सी ऐसी-वैसी बातों को करता रहता है। वे क्या सभी माननी चाहिए। हमारे बड़े कहते हैं कि मन के वस में नही होना चाहिए। उसकी आवाज नही सुननी चाहिए। उसे दवाना चाहिए। फिर भी यह सच है कि मेरा मन तुम्हें अच्छी तरह देखने को करता है।

कल्याणसिंह. तो देखती क्यो नहीं।

रामकली : डर जो लगता है।

कल्याणसिंह : इसमें भला डरने की क्या बात है? तुम मुझे प्यार करती हो, मैं तुम्हें प्यार करता हू और जो किसी को प्यार करता है वह उसे देखना भी चाहता है। इसलिए हम दोनो अगर एक-दूसरे को देखना चाहते हैं तो इसमें गुनाह कहां से आ गया। सुन लो, हम दोनों अच्छी तरह एक-दूसरे का मुह देख सकें, इसका कोई न कोई रास्ता निकालना ही है।

रामकली : रहने दो—रहने दो, ऐसा न करना। लालाजी को पता लग गया तो न जाने क्या हो जाएगा। उन्हें वहुत गुस्सा आता है।

कल्याणसिंह : (जोश के साथ) आता होगा। मैं किसीसे नहीं डरता। तुम्हें कोई न कोई रास्ता निकालना ही होगा। तुम दिनभर घर में रहती हो, (क्षणिक मौन) वोलती क्यों नहीं ? क्या सोच रही हो ?

रामकली : (शरारत से) वड़े वो हो। मतलव तुम्हारा और फंसाना मुझे चाहते हो।

कल्याणसिंह : अकेले मेरा ही मतलव है ? तुम्हारा नहीं ? कहो तो, अव कहतीं क्यों नहीं हो।

रामकली : (हंसकर) अच्छा-अच्छा, है···सुनो, मुझे एक रास्ता सूझता है, लेकिन···

कल्याणसिंह : लेकिन-वेकिन छोड़ो, रास्ता वताओ।

रामकली : तुमने तो हद कर दी। इतने वेसब्रे मत वनो।

कल्याणसिंह : सच कहता हूं, तुम्हारा मुंह देखने के लिए मैं इतना वेताव हो गया हूं कि कुछ भी कह सकता हूं, कुछ भी कर सकता हूं।

रामकली : सच ?

कल्याणसिंह : हां सच।

रामकली : अच्छा, तो सुनो। तुम दोपहर को खाना खाने घर आते हो न ?···

कल्याणसिंह : आता हूं। पर तब तो तुम ऊपर होती हो। मैं चारों ओर देखता रहता हूं कि कहीं तुम्हारी झलक दिखाई पड़ जाए लेकिन किलेबन्दी इतनी मजबूत होती है कि मैं तुम्हारी परछाईं तक नहीं देख सकता।

रामकली : जब मैं होती ही नहीं तो मेरी परछाईं कहां से देखोगे। खाना खाने के बाद तुम ऊपर जाते हो, उसके बाद दुकान चले जाते हो, तब कहीं जाकर मैं नीचे उतरती हूं।

कल्याणसिंह : नहीं तो, क्या तुम एक दिन जल्दी ही नीचे नहीं उतर सकतीं!

रामकली : मुझे ही बलिदान का बकरा बनाने पर तुले हुए हो। बात सुनते ही नहीं। सुनो, कल तुम ज़रा देर से ऊपर आना। मैं तब तक नीचे चलने के लिए उतर पड़ूंगी और उस वक्त जीने में हम दोनों एक दूसरे से टकरा जाएंगे।

कल्याणसिंह : (एकदम उछलकर) शाबाश, क्या रास्ता निकाला है! मान गया तुम खूबसूरत होने के साथ-साथ होशियार भी बहुत हो। कल मैं ऐसा ही करूंगा।

रामकली : इतने ज़ोर से मत बोलो। नायन पास ही बैठी रहती है। मुझे बड़ा डर लगता है। मगर हां,

लालाजी उस वक्त घर में ही होते हैं, ध्यान रखना।

कल्याणसिंह : अब होने दो। मुझे किसीकी चिन्ता नहीं। कोई भी आ जाए। (तभी पीछे के द्वार पर खटखटाहट होती है) लो, वह आ गई यमदूतनी नायन की बच्ची। मुझे अब बाहर जाना ही होगा। बातों ही बातों में वक्त किधर से आकर किधर चला गया, इसका पता ही नहीं चला। यह भी अजीब मुसीबत है। पति अपनी पत्नी के पास भी नहीं बैठ सकता। ओह, ये बूढ़े लोग···

(द्वार पर आहट तेज होती है। कल्याणसिंह झुंझला-कर बाहर चले जाते हैं। जब वहां प्रकाश उभरता है तो कोई नहीं दिखाई देता। क्षणभर बाद सूत्रधार और देवीप्रसाद मंच के अग्रभाग में प्रवेश करते हैं।)

देवीप्रसाद : कैसा अजीब दृश्य था। उन लोगों के दिमाग में क्या भूसा भरा रहता था? भला यह भी कोई बात है कि कोई अपनी घरवाली का मुंह न देखे!

सूत्रधार : वही तो जनाब। वही तो मैं बताना चाहता हूं। कल्याणसिंह ने मुंह देखने का साहस किया और इसके लिए उसे अपने पिता के हाथों पिटना पड़ा। उन्होंने कहा कि उस भ्रष्ट साधू के चक्कर

में फंसकर वह देश और धर्म को बरबाद करने पर तुल गया है। वह नास्तिक हो गया है लेकिन वे ऐसा नहीं होने देंगे। मार-मारकर उसके दिमाग से यह सब खुराफात निकाल देंगे। उसने समझा क्या है ?...और बहुत दिनों तक इसी बात को लेकर उनके घर में और पास-पड़ोस में हाहाकार मचा रहा। लेकिन युवक कल्याण-सिंह इन धमकियों से तनिक भी विचलित नहीं हुआ।

देवीप्रसाद : सचमुच वह साहसी था। उसने समाज को खोखला करनेवाले एक पाखण्ड का पर्दाफाश किया। लेकिन मैं नहीं समझता कि किसी भी तरह उसके इस काम को क्रान्ति कहा जा सकता है।

सूत्रधार : ठहरिए-ठहरिए। अभी किसी निर्णय पर पहुंचने का प्रयत्न न कीजिए। आगे की कहानी सुनिए। इसी घर में पच्चीस वर्ष बाद इन्हीं कल्याणसिंह का युवक पुत्र प्यारेलाल इन्हीं की तरह तत्कालीन सुधारकों से जा मिला और उसने प्रतिज्ञा की... (चक्र तेजी से घूम रहा है) वह देखो, वह चक्र कितनी तेजी से घूम रहा है। अब हम १६०१ में पहुंच गए हैं। आओ-आओ, इससे

पहले नया दृश्य आरम्भ हो, हम दर्शक-दीर्घा में लौट चलें।

(दोनों पीछे लौटते हैं। पृष्ठभाग में द्वार के पास प्रकाश उभरता है। गृहस्थी की दो-चार साधारण चीज़ें वहां रखी हैं और एक प्रौढ़ा बैठी हुई कोई भी काम कर रही होती है। वह प्रथम दृश्य की रामकली ही है। उसके पास पीढ़े पर उसका जवान बेटा प्यारेलाल बैठा हुआ ज़ोर-ज़ोर से कुछ कह रहा है। उसने पाजामा और कमीज़ पहन रखी है। सिर पर गोल टोपी है। आवेश के कारण उसका मुख लाल हो रहा है।)

प्यारेलाल : मैं कहता हूं मां, पुरुष को जब एक से अधिक शादी करने का अधिकार है तो नारी ने ही कौन-सा अपराध किया है। पुरुष एक स्त्री के जीते-जी दूसरी स्त्री ला सकता है लेकिन नारी भरी जवानी में और जवानी में ही क्यों, बचपन में ही पति के मर जाने पर दूसरी शादी नहीं कर सकती। उसने अपने पति को आंख उठाकर देखा तक नहीं। छोटी-सी नादान उम्र में ही वह विधवा हो गई है। वह यह भी नहीं जानती कि ज़िन्दगी किस चिड़िया का नाम है। विवाह होता क्या है? लेकिन यह बर्बर समाज उसे दूसरा विवाह करने का अधिकार नहीं देता। हां, तड़फने का अधिकार देता है। यौवन को

बरबाद करने का अधिकार देता है। चोरी-चोरी पाप करने का अधिकार देता है। लेकिन दूसरी बार अग्नि को साक्षी करके विवाह करने का अधिकार नहीं देता। विधर्मियों और विदेशियों ने हमारी इन्हीं कुरीतियों से लाभ उठाया है। वे ताकतवर हुए हैं और हम कमजोर। उनकी संख्या बढ़ी है, हमारी घटी है। हमारी जाति में दुराचार फैला है। हमारी नारियां घर छोड़-कर भाग जाने को मजबूर की जाती हैं। लेकिन अब हम यह अत्याचार नहीं होने देंगे। हमने निश्चय कर लिया है।

(कल्याणसिंह का प्रवेश। धोती-कमीज और साफा पहने है। चेहरे पर क्रोध है। प्यारेलाल खड़ा हो जाता है। मां सिर का पल्ला ठीक करती है।)

कल्याणसिंह : क्या निश्चय कर लिया है? किसको भाषण दिया जा रहा है? अपनी माताजी को? लेकिन उसको सुनाने से क्या होगा? अबे, मुझसे बात कर। मुझे मालूम है कि तेरा दिमाग खराब हो गया है। मैंने तुझे आर्यसमाज में जाने की इजाजत इसलिए दी थी कि तू कुल को कलंकित करे, मेरी नाक काटे, मेरे उदार होने का यह फल मुझे दे? बेशर्म, बेगैरत, मुझे सब कुछ

मालूम है, जो तूने किया है और जो तू करना चाहता है।

प्यारेलाल : मालूम है तो बहुत अच्छा है पिताजी ! मैंने जो किया है ठीक ही किया है।

कल्याणसिंह : ठीक क्या है और क्या नहीं, यह मैं जानता हूं। तेरे लिए क्या सही है और क्या गलत है, इसका फैसला करने का हक मुझे है। इस खानदान की इज़्ज़त किसमें है और किस बात में नहीं है इसको तेरे मां-बाप तुझसे कहीं अच्छी तरह जानते हैं। तू मेरा बेटा है। मेरी बिना इजाज़त तुझे कुछ भी करने का हक नहीं। समझा ? (पत्नी से) जानती है, तेरे इस लाडले ने क्या किया है ?

रामकली : (घबराकर) बताओगे तभी तो जानूंगी। मुझे तो इसकी बातें सुनकर लग रहा था कि ज़रूर इसने कुछ ऐसा-वैसा किया है।

कल्याणसिंह : ऐसा-वैसा ? मैं कहता हूं प्यारे की मां, सुनेगी तो शर्म से तेरा सिर झुक जाएगा। शायद सुन भी न सके और बेहोश हो जाए। मैं नहीं जानता मैंने कैसे यह सब सुन लिया।

रामकली : मेरे दिल में तो सचमुच हौल उठने लगी है। अब तुम जल्दी से बताओ भी कि उसने क्या किया।

कल्याणसिंह : लाला गुणचन्द को जानती है ?

रामकली : क्यों न जानूंगी। वही रामपुर वाले। बेचारों की बेटी पर ऐसी विपता पड़ी कि भगवान न करे किसी पर पड़े। लड़की ऐसी है जैसे साक्षात् देवी का रूप। जैसा रूप वैसा ही स्वभाव। बोलती है तो मोती झरते हैं। मजाल है कभी किसी की ओर आंख उठाकर देख ले। लेकिन राम ने उसपर कैसा जुल्म किया। हाथ की मेंहदी सूखने भी न पाई थी कि मांग का सिंदूर पुंछ गया।

कल्याणसिंह : (दीर्घ निःश्वास लेकर) जो भाग्य में लिखा है, वह क्या मिट सकता है ? लेकिन प्यारे की मां, सचमुच उस दिन तो मैं भी रो पड़ा। हाय-हाय, बेचारी फूल-सी बच्ची ! विधाता ने उसे मसलकर रख दिया। बेचारी विधवा हो गई, (क्षणिक अवकाश) लेकिन जो होना था सो हो गया। अब तो सारी जिन्दगी उसको सती बनकर जीना है। शास्त्र का विधान ही ऐसा है। विधवा घर की देवी है, पूजनीय है, लेकिन (स्वर में तलखी) कैसा जमाना आ गया है। कुछ सिरफिरे लोग कहते हैं कि विधवा का विवाह होना चाहिए। पापी, लम्पट, शास्त्र की बात लांघना चाहते

हैं। धर्म को भ्रष्ट करना चाहते हैं। अरे हमारे धर्म का डंका तो सारी दुनिया में बज रहा है और (धीमा पड़कर) और तुम्हारा यह लाडला बेटा उसी धर्म को कलंकित करने पर तुल गया है। वह उन्हीं पापियों के साथ जा मिला है। कानों में रुई देकर ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाता है कि विधवा का विवाह न करने से हम मिट रहे हैं, कमज़ोर हो रहे हैं, बरबाद हो रहे हैं। (गहरा निःश्वास) इतना ही होता तो भी मैं चुप रह जाता, लेकिन आज तो इसने हद कर दी। भरे समाज में सबके सामने मेरे मुंह पर कालिख पोत दी, मेरे कुल पर कलंक लगा दिया।

रामकली : सच ? क्या किया इसने, जल्दी बताओ ना।

कल्याणसिंह : (कांपते हुए) इसने प्रतिज्ञा की है कि यह लाला सुगनचन्द की विधवा बेटी कलावती से विवाह करेगा।

रामकली : (कांपकर) क्या ? (जैसे बेहोश हो जाएगी) नहीं-नहीं...

कल्याणसिंह : पूछ ले इससे। पूछ, नहीं की इसने प्रतिज्ञा ?

प्यारेलाल : पूछने की कोई ज़रूरत नहीं। मैंने प्रतिज्ञा की है और मैं उसका पालन करूंगा।

रामकली : (व्यग्र भाव से) नहीं-नहीं, ऐसा नहीं हो सकता।

तू ऐसा कर ही नहीं सकता। कभी नहीं कर सकता। कह दे यह बात झूठी है। जोश में आकर तूने ऐसा कह दिया था।

प्यारेलाल : नहीं मां, मैंने जोश में आकर नहीं होश में आकर ही ऐसा किया है। और होश में रहते मैं पीछे नहीं हटूंगा।

कल्याणसिंह : (चीखकर) तूने होश में आकर किया या जोश में आकर लेकिन सुन ले, मैं ऐसा नहीं होने दूंगा। मैं तेरे हाथ-पैर तोड़ दूंगा।

प्यारेलाल : आप मेरे हाथ-पांव तोड़ सकते हैं लेकिन मेरी प्रतिज्ञा नहीं तोड़ सकते। मेरी जान ले सकते हैं लेकिन मुझे उससे विवाह करने से नहीं रोक सकते। मैं अपनी प्रतिज्ञा पूरी करके ही रहूंगा।

कल्याणसिंह ठहर प्रतिज्ञा के बच्चे, मैं तुझे बताता हूं। लातों के भूत बातों से नहीं माना करते (आगे बढ़कर जोर से प्यारेलाल के गालों पर तमाचे मारना शुरू कर देता है। मारता रहता है) ले और प्रतिज्ञा कर, और कर, और कर। मैं बताता हूं तुझे कि प्रतिज्ञा क्या होती है।

रामकली : (तड़पकर पति का हाथ पकड़ने की कोशिश करती है) नहीं-नहीं, यह क्या कर रहे हो। जवान बेटे को इस तरह नहीं मारा करते।

कल्याणसिंह : तू परे हट (धकेल देता है) जबतक आप ज़िन्दा है बेटा कभी जवान नहीं होता। मैं आज इसकी जान निकाल दूंगा। (फिर मारता है) यह ऐसा नहीं कर सकता। इसे अभी समाज मन्दिर में जाकर ऐलान करना होगा कि इससे गलती हो गई।

प्यारेलाल : (उसी दृढ़ता से) आप मुझे जान से मार सकते हैं लेकिन जब तक मैं ज़िन्दा हूं मैं अपना वचन वापस नहीं लूंगा। विवाह करूंगा तो उसी से करूंगा, मर गया तो दूसरी बात है।

रामकली : (रोकर) यह सब क्या हो रहा है। मेरे बच्चे, तू समझता क्यों नहीं। तुझे अपने खानदान की बात सोचनी चाहिए। धर्म की बात सोचनी चाहिए। जो बात हमारे पुरखे कह गए हैं, वह गलत कैसे हो सकती है। शास्त्र में कोई गलत कैसे लिख सकता है। (पति से) अजी, तुम इसे अच्छी तरह समझाओ। गुरुजी के पास भेजो। मारो मत। देखो क्या बुरा हाल कर दिया बेचारे का। तुम भी जब खून सवार होता है तो बस…

: मैं इसका सचमुच ही खून कर दूंगा।

तुम यहां से चले जाओ। जाओ अपनी दूकान

पर जाओ।

कल्याणसिंह: दुकान पर जाकर मैं क्या मुंह दिखाऊंगा। अब तो मैं फैसला करके ही आऊंगा।

प्यारेलाल: मैं भी फैसला करके ही आया हूं।

कल्याणसिंह: (दांत पीसकर) बदजात कमीने जबान लड़ाता है। मैं अब भी कहता हूं कि तू ठीक रास्ते पर आ जा।

रामकली: (गिड़गिड़ाकर) हां बेटा ये तेरे भले की ही बात कहते हैं।

प्यारेलाल: मां, अब तक मैं इनके भले की ही बात सुनता आया हूं। आज पहली बार मुझे अपना भला करने का मौका मिला है। उस भले में ही समाज का भला है धर्म का भला है।

कल्याणसिंह: (क्रोध के दुखद आवेग में बेहद गरम हो जाता है। प्यारेलाल की ओर ऐसे घूरता है जैसे खा जाएगा) धर्म और समाज के बच्चे मैं पूछता हूं धर्म और समाज के बारे में तू ज्यादा जानता है या मैं? आज तुझमें इतना साहस पैदा हो गया है कि मुझसे इस तरह बातें करे। जिसने तुझे पैदा किया उसी को धर्म सिखाए। जिसने पाला-पोसा, उससे ज्यादा जानने का दावा करे। ऐ तेरी यह हिम्मत! हरामी पिल्ले! (

कल्याणसिंह : तू परे हट (धकेल देता है) जबतक बाप है बेटा कभी जवान नहीं होता। मैं आज जान निकाल दूंगा। (फिर मारता ऐसा नहीं कर सकता। इसे अभी समाज में जाकर ऐलान करना होगा कि इससे हो गई।

प्यारेलाल : (उसी दृढ़ता से) आप मुझे जान से मा हैं लेकिन जब तक मैं ज़िन्दा हूं मैं अपन वापस नहीं लूंगा। विवाह करूंगा तो करूंगा, मर गया तो दूसरी बात है।

रामकली : (रोकर) यह सब क्या हो रहा है। मे तू समझता क्यों नहीं। तुझे अपने खान बात सोचनी चाहिए। धर्म की बात चाहिए। जो बात हमारे पुरखे कह ग गलत कैसे हो सकती है। शास्त्र में क कैसे लिख सकता है। (पति से) अजी अच्छी तरह समझाओ। गुरुजी के पा मारो मत। देखो क्या बुरा हाल बेचारे का। तुम भी जब खून सवा तो बस…

कल्याणसिंह : मैं इसका सचमुच ही खून कर दूंगा।

रामकली : तुम यहां से चले जाओ। जाओ अप

भींचकर मारने को दौड़ता है) तो फिर सुन ले। अगर तूने यही फैसला किया है तो मेरा भी फैसला सुन ले। इस क्षण के बाद तू इस घर में पैर नहीं रख सकेगा।

रामकली : नहीं-नहीं, यह क्या कहते हो ?

कल्याणसिंह : मैं ठीक कहता हूं।

प्यारेलाल : और मैं भी ठीक कहता हूं। मैं अब इस घर में नहीं रहूंगा। (बाहर जाने को बढ़ता है) मैं अब तुम्हें अपना मुंह नहीं दिखाऊंगा। भीख मांगकर खा लूंगा लेकिन इस दरवाज़े पर पैर नहीं रखूंगा। (दाईं ओर से जाता है)

रामकली : (पीछे जाती हुई) बेटा-बेटा, सुन तो। (कल्याणसिंह से) अजी तुम खड़े-खड़े क्या देख रहे हो, उसे बुलाते क्यों नहीं ? वह कहीं गुस्से में कुछ कर बैठा तो ?

कल्याणसिंह : अब और इससे ज़्यादा बुरा क्या करेगा। वह मेरे लिए मर गया। मैं समझूंगा, मेरे एक बेटा नहीं था लेकिन मैं उसे वापस नहीं बुला सकता। मैं नहीं जानता था कि यह दिन देखने को ज़िंदा रहूंगा जब मेरा ही बेटा मेरे सामने खड़ा होकर मेरे मुंह पर मेरा विरोध करे, मेरी बात मानने से इन्कार कर दे, लेकिन यह खानदान की

इज्जत का सवाल है। इसे दबाने के लिए मैं जो भी कर सकूंगा, करूंगा। मैं इसपर ऐसे हजारों बेटों को कुरबान कर सकता हूं लेकिन किसी के सामने झुक नहीं सकता। (यह कहते हुए तेजी से बाहर चला जाता है। कातर भाव से हाथ फैलाए पीछे-पीछे रामकली भी जाती है)

रामकली : (जाते-जाते) हे भगवान, यह सब क्या हो रहा है।

(सब बाहर चले जाते हैं। एक क्षण के लिए मंच पर अन्धकार छा जाता है। फिर से प्रकाश होने लगता है। बहुत-से व्यक्ति मंच पर बैठे दिखाई देते हैं। बीच में हवन-कुण्ड रखा हुआ है, मंत्र-पाठ हो रहा है—कई क्षण तक होता रहता है। फिर प्यारेलाल और कलावती वर-वधू के रूप में आसनों पर आ बैठते हैं। पण्डितजी बोलते हैं)

पण्डितजी : अब कन्या को वर के सम्मुख लाएं और दोनों वर-कन्या यह मंत्र बोलें :
ओं समञ्जन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ।
सं मातरिश्वा सं धाता समुदेष्ट्री दधातु नौ॥

प्यारेलाल }
कलावती } : (एक साथ बोलते हैं)
ओं समञ्जन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ।
सं मातरिश्वा सं धाता समुदेष्ट्री दधातु नौ॥

पण्डितजी : अब वर दक्षिण हाथ से वधू का दक्षिण हाथ पकड़ के यह मंत्र पढ़े :

ओं यदैषि मनसा दूरं दिशोऽनुपवमानो वा।
हिरण्यपर्णो वैकर्णः सत्वा मन्मनसां करोतु असौ॥

प्यारेलाल
कलावती : (एक साथ)

ओं यदैपि मनसा दूरं दिशोऽनुपवमानो वा।
हिरण्यपर्णो वैकर्णः स त्वा मन्मनसां करोतु असौ॥

पंडितजी : अब वर और वधू अलग-अलग प्रतिज्ञाएं करें।

प्यारेलाल : हे वरानने, जैसे मैं ऐश्वर्य, सन्तान आदि सौभाग्य की वढ़ती के लिए तेरे हाथ को ग्रहण करता हूं, तू मुझ पति के साथ सुखपूर्वक जरावस्था को प्राप्त हो।

कलावती : हे वीर! मैं सौभाग्य की वृद्धि के लिए आपके इस हस्त को ग्रहण करती हूं। आप मुझ पत्नी के साथ वृद्धावस्थापर्यन्त प्रसन्न और अनुकूल रहिए। आपको मैं और मुझको आप आज से पत्नी-पति भाव करके प्राप्त हुए हैं। (उपस्थित सज्जन हर्षध्वनि करते हैं। तभी वाहर से उठता हुआ शोर वहां छा जाता है। वहुत-से लोग मंच के द्वार पर आकर वोलते हैं)

बाहर का व्यक्ति : यह पाप है। विधवा का विवाह करना शास्त्र और धर्म के विरुद्ध है। जो ऐसा करते हैं वे दुष्ट हैं, शूद्र हैं, नीच और नराधम हैं। हम यह पाप नहीं होने देंगे।

(इधर से भी लोग उठकर चीखने लगते हैं।)

भीतर का व्यक्ति : यह पाप नहीं है। पाप तुम लोग करते हो। तुम्हारे घरों में व्यभिचार होता है। तुम्हारी लड़कियां विधर्मी भगा ले जाते हैं। पाप वह है।

पंडितजी : शान्त-शान्त ! आप लोग शान्त रहिए। उन लोगों को शोर करने दीजिए। जब-जब भी सुधार और क्रांति का स्वर उठता है, पाखण्डी लोग इसी तरह बाधा देते हैं। लेकिन विश्वास रखिए, वे हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। शोर मचाने वाले कायर होते हैं। उनमें क्रान्ति का सामना करने का साहस नहीं होता। कायर कभी सदाचारी नहीं हो सकता।

भीतर का व्यक्ति : हां-हां, हम उनसे नहीं डरते। आज प्यारेलाल ने क्रान्तिकारी कदम उठाया है। हम उसके साथ हैं। हम उसका बाल भी बांका नहीं होने

देंगे। (बाहर से भी शोर मचता है, अन्दर से भी शोर मचता है और मंच पर अंधकार छा जाता है। क्षण भर में सब कुछ शान्त हो जाता है और अब प्रकाश मंच पर प्रवेश करते सूत्रधार और देवीप्रसाद पर पड़ता है)

देवीप्रसाद : ओह ! यह सब देखकर मेरे रोंगटे खड़े हो गए। लेकिन अब सोचता हूं तो हंसी आती है। (हंस पड़ता है) कैसे लोग थे उस ज़माने के।

सूत्रधार : यही तो मैं तुम्हें बताना चाहता हूं। इन्हीं के बीच में मुझे क्रान्ति की खोज करनी है। कल्याणसिंह ने अपने युग में साहस किया कि वह दिन में पत्नी का मुंह देख सके। वही साहस जब उसके बेटे ने दिखाया और विधवा-विवाह किया तो उसी ने अपनी सन्तान का विरोध किया। उसे पाप कहा। क्रान्ति रूढ़ि बन गई।

देवीप्रसाद : मेरी कुछ समझ में नहीं आता। क्रान्ति, रूढ़ि। आखिर इन इन शब्दों का अर्थ क्या है ? इन शब्दों के अर्थ क्या हम सचमुच जानते हैं ?··· अरे लो, यह तुम्हारा चक्र फिर तेज़ी से घूमने लगा।

सूत्रधार : यह चक्र कभी नहीं रुकता। जो आज क्रान्ति करने का दावा करते हैं, कल वे ही प्रतिक्रिया-

वादी हो जाते हैं। इतिहास बार-बार अपने को दोहराता है। वे समझते हैं उन्होंने समय को पकड़ लिया है लेकिन जादूगर काल उन्हें फांकी देकर न जाने कब आगे बढ़ जाता है और उसके मंच पर आ जाती है एक नई पीढ़ी जो उसके लिए अजनबी होती है। प्यारेलाल ने अपने माता-पिता के विरुद्ध विद्रोह किया, लेकिन जब उनकी अपनी लड़की ने समय का साथ देने का प्रयत्न किया तो वह आग-बबूला हो उठे। यह गांधीजी के असहयोग आन्दोलन का प्रारम्भिक युग है। चारों तरफ उत्तेजना फैली है। असंख्य युवक उस जादूगर के प्रभाव में आ चुके हैं। युवतियां भी पीछे नही हैं। प्यारेलाल की बेटी शारदा उन्हीं में है। घर की चारदीवारी लांघ-कर वह समाज में खुले मुह ही नही घूमती, बल्कि उसके सिर का पल्ला भी खिसककर कन्धे पर आ गया है। वह केवल पुरुषों की तरह भाषण ही नही देती, रणचण्डी की तरह आग भी उगलती है।...अरे, तुम ऐसे पागलों की तरह क्या देख रहे हो?

देवीप्रसाद : कुछ नही। मुझे याद आ रहा है जैसे यह कहानी मैंने कहीं सुनी हो।

सूत्रधार : सुनी होगी, लेकिन इस समय इसे अपनी आंखों से देखो। नया दृश्य आरम्भ होने वाला है। आओ हम दर्शक-दीर्घा में चलें।

(सूत्रधार उसे खींचकर पीछे ले जाता है। मंच के पृष्ठ-भाग में प्रकाश उभरने लगता है। वहां नारियों की एक छोटी-सी भीड़ लगी हुई है और एक ऊंचे स्थान पर खड़ी हुई एक युवती भाषण दे रही है।)

शारदा : प्यारी बहनो, मैं तुम्हें अपनी कहानी सुना रही थी। मैं पूरे विश्वास के साथ आपसे कहती हूं कि जिस दिन मेरे सुधारक पिता श्रीमान प्यारेलालजी ने भरे बाज़ार में मेरे गाल पर इसलिए थप्पड़ मारा था कि मेरी साड़ी का पल्ला सिर से उतर गया था, तो मैंने उसी दिन निश्चय कर लिया था, कि मैं इन पुराने दकिया-नूसी रीति-रिवाजों को अब और नहीं मानूंगी। रहा होगा कभी किसी युग में सिर ढकना अच्छी बात, रहा होगा कभी नारी का घर की चार-दीवारी में बन्द रहना अच्छा, लेकिन आज इन बातों की कोई ज़रूरत नहीं है। यह रूढ़ियां हमें कमजोर बनाती हैं। हम इन्हें स्वीकार नहीं

काढ़ना यह सब अच्छा समझा जाता था। लेकिन आज मुंह खोलना पाप नहीं समझा जाता। फिर सिर खोलना ही पाप क्यों? भगवान की कृपा से हमें अपने हौसले दिखाने का अच्छा अवसर मिल गया है। गांधीजी ने देश को आज़ादी के लिए असहयोग-आन्दोलन करने का ऐलान किया है। उन्होंने कहा है कि इस युद्ध में नारी को भी पुरुष के कंधे से कंधा भिड़ाकर भाग लेने का अधिकार है। किसी समय राजपूत लोग लड़ने के लिए युद्ध में जाते थे और उनकी नारियां उनके हार जाने पर सती होकर जल जाती थीं। आखिर वे भी मरती ही तो थी। मैं कहती हूं कि घर के अन्दर बैठकर मरने से यह बेहतर है कि हम भी पुरुषों की तरह कष्टों का सामना करें और तब यदि मौत आए तो हंसते-हंसते उसे गले में लगा लें। प्राचीन इतिहास में ऐसे उदाहरण मिलते हैं जब पत्नियां पतियों के साथ रथ में बैठकर युद्ध करती थीं। बेशक ऐसे उदाहरण कम हैं लेकिन अब समय बदल गया है। नारी पुरुष से किसी भी बात में पीछे नहीं है। उसके अधिकार समान हैं, उसके कर्तव्य भी समान हैं। इसलिए मेरी —

बहिनो, हमने निश्चय किया है कि पुरुषों के साथ-साथ हम भी पिकेटिंग करेंगी, विदेशी कपड़ों की होली जलाएंगी, विद्यार्थियों को सरकारी स्कूलों में नहीं जाने देंगी। वकीलों को कचहरी जाने से रोकेंगी। आज हम थोड़ी दिखाई देती हैं लेकिन यदि मेरी आवाज़ घर की दीवारों को फांदकर अन्तःपुरचारिणी मेरी मांओं और बहनों तक पहुंचती है, तो मैं उनसे प्रार्थना करूंगी कि वे अपने को पहचानें। वे शक्ति हैं, और शक्ति के मार्ग में घर की चारदीवारी तो क्या, हिमालय जैसे नगाधिराज भी बाधा नहीं दे सकते। (ज़ोर से तालियां गूंजती हैं, और नारे उठते हैं)

कई स्वर : शारदा रानी की जय ! नारी शक्ति है। हम शक्ति हैं। हम आपके साथ हैं।

(सहसा बाहर से कोलाहल बढ़ता हुआ पास आता है।)

शारदा : यह कोलाहल कैसा है ? यह भीड़ इधर कैसी आ रही है ? (देखकर हंसती है) ओह ! पुलिस है। वह हमें गिरफ्तार करने आई है। बड़ी खुशी से कर ले। हम अपने पथ से विचलित नहीं होंगी।

कई स्वर : हां, हम अपने पथ से विचलित नहीं होंगी। हम गिरफ्तार होने को तैयार हैं।

(कई सिपाहियों के साथ एक सार्जेण्ट मंच पर आता है।)

सार्जेण्ट : यह मजमा गैर-कानूनी है। मैं हुक्म देता हूं कि तुम लोग यहां से चली जाओ।

शारदा : हम यहां से जाने के लिए नहीं आई हैं। पिकेटिंग करने के लिए आई हैं। हम पिकेटिंग करेंगी।

सार्जेण्ट : तब मुझे अफसोस है। मुझे आपको गिरफ्तार करने का हुक्म है।

शारदा : आप बड़ी खुशी से उस हुक्म का पालन कर सकते हैं।

सार्जेण्ट : लेकिन मैं फिर आपसे कहता हूं कि आप चली जाएं। आप स्त्रियां हैं। आपको घरों में रहना चाहिए।

शारदा : आपकी सलाह के लिए धन्यवाद। लेकिन हम अब समझ गई हैं कि यह सलाह गलत है। स्त्रियां घरों में रहने के लिए नहीं होतीं। वे दिन अब लद गए। क्या तुम नहीं जानते कि आदिशक्ति, महाचण्डी, महामाया, महाकाली ये सभी स्त्रियां थीं। इन्होंने ही अनाचारी दानवों को मारकर सृष्टि की रक्षा की थी। इसलिए हम

अब घर नहीं जाएंगी। विदेशी कपड़ों की होली जलाकर दासता रूपी दानव का संहार करेंगी।

सार्जेण्ट : (खीझकर) सिपाहियो, ये नहीं मानतीं। तुम इन्हें घेरे में ले लो और पुलिस-स्टेशन ले चलो।

(सिपाही आगे बढ़कर उनको घेरते हैं। शोर उभरता है। इसी बीच में बाहर की ओर से कई व्यक्ति भागे हुए आते हैं।)

पहला व्यक्ति : अरे-अरे ! यहां तो पुलिस स्त्रियों को गिरफ्तार कर रही है।

दूसरा व्यक्ति : अधर्म, घोर अधर्म ! स्त्रियां घर से बाहर निकलने लगीं। प्रलय के दिन आ गए। छिः छिः, जो असूर्यपश्याएं थीं, परपुरुष की छाया जिन्हें भ्रष्ट कर देती थी, उन्हें पुलिस के ये शैतान लोग जेल ले जाएंगे ! ये जेल में रहेंगी ! तब ये पवित्र कैसे रह सकती हैं। हरे ! हरे ! कैसा घोर अधर्म होने लगा है। जिस समाज में स्त्रियां स्वेच्छाचारिणी हो जाती हैं, वह समाज नष्ट हो जाता है।

पहला व्यक्ति : समाज के नष्ट हो जाने में अब क्या देर है। हमें क्या-क्या नहीं देखना पड़ रहा है। लेकिन पंडितजी, यह लड़की जो अभी भाषण दे रही थी, इसको मैं पहचानता हूं। यह आर्यसमाज

के नेता श्री प्यारेलालजी की पुत्री है। इसका नाम शारदा है। हरे! हरे! कैसा कलजुग आ गया। चलूं इसके घर वालों को सूचना तो दूं। वैसे लडकी है साहसी।

दूसरा व्यक्ति : खाक साहसी है। नारी को ऐसा साहस शोभा नहीं देता। राक्षस, दैत्य, दानव—क्या ये कम साहसी होते हैं? नारी की शोभा कोमलता और सुन्दरता है। पौरुष और वाचालता नहीं है। हरे! हरे!

(इसी बीच में पुलिस स्त्रियों को लेकर बाहर चली गई है। उनके पीछे-पीछे ये दोनों भी बातें करते हुए बाहर चले जाते हैं। एक क्षण के लिए मच पर अधकार छा जाता है। फिर प्रकाश उभरने लगता है। तभी देवीप्रसाद तेज़ी से मच पर प्रवेश करते हैं। लेकिन उतनी ही तेज़ी से सूत्रधार उन्हें खींचकर दर्शक-दीर्घा में ले जाते हैं।)

सूत्रधार . अभी नहीं, अभी यह अंक पूरा नहीं हुआ।

(उनके बाहर जाते ही पृष्ठभाग में प्यारेलाल घबराए हुए अन्दर आते हैं।)

प्यारेलाल : (व्यग्र होकर) तुम कहां हो शारदा की माता! तुमने कुछ सुना?

(कलावती तेज़ी से अन्दर से आती है।)

कलावती : क्या हुआ, क्या बात है? आप ऐसे क्यों घबरा

रहे हैं ?

प्यारेलाल : पुलिस शारदा को पकड़कर ले गई।

कलावती : (कांपकर) नहीं, नहीं ! (घबराकर दीवार थाम लेती है)

प्यारेलाल : (तेज़ी से इधर-उधर घूमता हुआ) अब नहीं-नहीं करने से क्या होता है। वह इस समय जेल में है। उसने सिर से पल्ला क्या उतारा, कुल की लाज ही उतार दी। मैंने उसे कितना धमकाया, पीटा तक, पर वह नहीं मानी। उसने पिकेटिंग की, विदेशी कपड़ों की होली जलाई और पुलिस उसे पकड़कर ले गई। बेशर्म, निर्लज्ज !

कलावती : हे भगवान ! अब क्या होगा। जवान लड़की जेल में है। हम समाज में कैसे मुंह दिखाएंगे। अजी तुमने कुछ किया भी उसे छुड़ाने के लिए? अगर वह रात-भर वहां रह गई तो…

प्यारेलाल : तुम एक रात की बात करती हो। न जाने वह कब तक वहां रहेगी। देश-भर पागल हो रहा है। सब लोग स्कूल-कालेज छोड़ रहे हैं। वकीलों ने कचहरी जाना बन्द कर दिया है। भला यह कोई बुद्धिमानी के काम हैं ? शिक्षा का नाश करके लोग आज़ादी लेना चाहते हैं। आज़ादी

मैं भी चाहता हूं। गुलामी बहुत बुरी है। पाप है। लेकिन उसको मिटाने के रास्ते और हैं। अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारकर आजादी नहीं ली जा सकती। फिर स्त्रियां जेल गईं तो धर्म की रक्षा कैसे होगी? मेरी कुछ समझ में नहीं आता। मेरी कोई नहीं सुनता…

कलावती : लेकिन तुम तो किसीकी सुनो। मैं कहती हूं कि भैया के पास जाओ और किसी तरह उसे छुड़ाकर लाओ।

प्यारेलाल (तेजी से) तुम छुड़ाने की बात कहती हो, अगर वह छूट भी आए, तो मैं उसे इस घर में नहीं आने दूंगा। लोग मुझ पर ताने कस रहे हैं कि और भेजो लडकियों को स्कूल, और आज़ादी दो घर की स्त्रियों को, और पढ़ाओ नारियों को। कल को देख लेना किसी न किसी के साथ भाग जाएगी। भला यह कहीं औरतों के काम हैं। आज़ादी के लिए लड़ें तो हम पुरुष लड़ें। भगवान ने स्त्री-पुरुषों के कर्तव्य सोच-समझकर बांटे हैं। स्वामी दयानन्द से ज्यादा कोई देश को क्या प्रेम करेगा। उन्होंने यूंही नहीं लिखा…

कलावती : यह सब तो मुझे भी मालूम है। तुम इनकी बात सोचो। आखिर वह अपनी बेटी है। पहले जाकर

भैया से सलाह करो। और बातें बाद में देखी जाएंगी।

प्यारेलाल : तुम सोचती हो जैसे मैंने कुछ किया ही नहीं ? जब उसका बड़ा भैया सुभाष आज़ादी के दीवानों के साथ गोली-बन्दूक का खेल खेल रहा था तो उसे रास्ते पर लाने के लिए मैंने क्या नहीं किया लेकिन क्या वह माना ? वह सदा के लिए घर छोड़कर चला गया। यह सारे भाई-बहिन एक जैसे हैं। शारदा ने घर आने से इन्कार कर दिया है।

कलावती : (हतप्रभ) इन्कार कर दिया है ?

प्यारेलाल : उसने कहा कि अगर वह छूट भी गई तो वहीं आश्रम में रहेगी, घर नहीं आएगी।

कलावती : तो आप मुझे वहां ले चलिए। देखती हूं, वह कैसे नहीं आएगी।

प्यारेलाल : नहीं, अब मैं वहां नहीं जाऊंगा।

कलावती : तो मैं जाती हूं। (जाने को मुड़ती है)

प्यारेलाल : (एकदम क्रुद्ध होकर) ठहरो, तुम कहीं नहीं जा सकतीं। क्रान्ति मैंने भी की है, लेकिन क्रान्ति का अर्थ यह नहीं है कि कुल, समाज और धर्म की लाज को घोलकर पी लिया जाए। मैं स्वयं जाता हूं। देखता हूं, वह कैसे नहीं आती। उसे

आना ही होगा। (उसी तेजी से जाता है)

फलावती : (पीछे जाती है) रुको, रुको। मैं कहती हूं, शान्ति से काम लो। जवान लड़की है। ठहरो, मैं भी साथ चलती हूं। भैया से जाकर पूछती हूं…

(दोनों बाहर चले जाते हैं। मंच पर फिर क्षणिक अन्धकार छा जाता है। उसके बाद अग्रभाग में प्रकाश होने लगता है और उसके साथ ही एक युवक और एक युवती मुक्त भाव से बातें करते हुए मंच पर प्रवेश करते हैं।)

विमल : मैं तुम्हारे साहस की प्रशंसा करता हूं शारदा। तुम जैसी नारियों पर ही इस देश की स्वतंत्रता निर्भर करती है। गांधीजी ने भी यही कहा है कि धर्म नारियों के हाथ में है। (मुस्कराकर) मेरे पिताजी गांधीजी के परम भक्त हैं। मेरे उस प्रस्ताव पर उन्होंने तनिक भी आपत्ति नहीं की।

शारदा : सच ? क्या तुमने उनको सब कुछ बता दिया ?

विमल : बताने की आवश्यकता तो तब थी जब वे कुछ न जानते होते। वे तो तुम्हारे बारे में मुझसे भी ज्यादा जानते हैं। जब मैंने उनके सामने तुम्हारा नाम लिया तो वह गद्गद हो उठे। बोले, "तुम शारदा की बात कहते हो। वह तो वीरांगना

है। साक्षात् लक्ष्मीबाई। अब देश निश्चय ही स्वतंत्र हो जाएगा। काश, मेरी भी ऐसी ही कोई पुत्री होती।" तब मैंने कहा···

शारदा : (विमुग्ध-सी) क्या कहा?

विमल : मैंने कहा, "पिताजी, आप उसे अपने घर की बहू बना सकते हैं?" सुनकर वे मेरी ओर देखने लगे। बोले, "क्या तुमने उससे बातें की हैं?"

शारदा : (पूर्ववत्) तब तुमने क्या कहा?

विमल : वही, जो मुझे कहना चाहिए था। उसी घड़ी की तो मैं इन्तज़ार में था। मैंने कहा, "हां, हां, पिताजी, मैंने बातें की हैं। वह तैयार है।" इस पर पिताजी बोले, "क्या उसके माता-पिता भी तैयार होंगे?" तब मैंने कहा, "उन्हें तैयार करना आपका काम है।" इस पर पिताजी बड़े ज़ोर से हंसे। बोले, "मुसीबत का काम तो तूने मेरे लिए ही छोड़ दिया। खैर, यह काम मैं करूंगा।" और मैं समझता हूं कि जब लड़के का पिता राज़ी है तो लड़की के पिता को कोई ऐतराज़ नहीं होना चाहिए। इसलिए शारदा! जल्दी ही मेरे पिताजी तुम्हारे पिताजी से मिलेंगे और शादी का प्रस्ताव रखेंगे।

शारदा : ओह, विमल, तुम्हारे पिताजी कितने अच्छे हैं!

उन्हें जात-पात, प्रान्त, किसी बात की चिन्ता नहीं। मैं संयुक्त प्रान्त की अग्रवाल, तुम पंजाब के खत्री।

विमल : तुम भी कैसी बातें करती हो। ये बातें तो तुम्हारे पिताजी भी नहीं मानते। वे तो कट्टर आर्य-समाजी हैं। मेरे पिताजी का प्रस्ताव सुनकर वे बहुत प्रसन्न होंगे। उनको तो यही डर है ना कि तुमसे कौन शादी करेगा। तुम जेल में रह आई हो। जो नारी जेल में रह चुकी होती है, तुम्हारा दकियानूसी समाज उसे दुराचारिणी समझता है। लेकिन मैं उस दुराचारिणी को अपने दिल में स्थान दूंगा। जब मैं तैयार हूं तो तुम्हारे परिवार वालों को क्या आपत्ति हो सकती है।

शारदा : होनी तो नहीं चाहिए लेकिन मैं अपने पिताजी को जानती हूं, वे बड़े कट्टर हैं। अपने दायरे से बाहर नही निकल सकते। इसलिए वे निश्चय ही मनाकर देंगे। लेकिन मैं उनकी चिन्ता नही करती। मैं अपने पथ से पीछे नहीं हटूंगी। मैं बालिग हूं। अपना भविष्य बनाने का मुझे अधिकार है।

विमल : शाबाश। मैंने कल्पना भी नही की थी कि कोई हिन्दू लड़की इस तरह बातें कर सकती है।

तुम्हारे मुंह से ये बातें सुनकर क्या बताऊं कैसा-कैसा लगता है। ओह, तुम कितनी साहसी हो शारदा।

शारदा : (हंसकर) कहो झांसी की रानी हूं, कहो ना।

विमल : (भावावेश) मेरी झांसी की रानी, (दोनों खिल-खिलाकर हंस पड़ते हैं) अब तुम जान गईं, मैं क्यों तुम्हें अपनी बनाना चाहता हूं, इसी कारण।

शारदा : (शरारत से) केवल इसी कारण?

विमल : नहीं-नहीं, एक और भी कारण है।

शारदा : वह क्या है?

विमल : ऊं हुं, वह नहीं बताऊंगा। अच्छा किसी से कहोगी तो नहीं।

शारदा : नहीं कहूंगी, बताओ।

विमल : तुम्हारी आंखें बड़ी सुन्दर हैं, क्या नहीं हैं?

शारदा : (लजाकर) तो उससे क्या?

विमल : आंखें दिल का दर्पण होती हैं। तुम्हारा दिल भी सुन्दर है। इसीलिए मैं तुम्हें प्यार करता हूं।

शारदा : (पूर्ववत्) हटो, यह भी क्या कहने या बताने की बात थी?

विमल : तुमने ही तो पूछा था। इसलिए मैं बिना कहे

नहीं रह सका। अब नाराज क्यों होती हो?

शारदा : नहीं, मैं नाराज कहां हूं। लेकिन सुनो, मैंने फिर जेल जाने का निश्चय कर लिया है। पर वे लोग स्त्री-पुरुषों में अन्तर करते हैं। हमें अबला मानते हैं और ज्यादा दिन नहीं रखते।

विमल : अभी तो आरम्भ है। जल्दी ही तुम लोगों के साथ भी वे लोग वही व्यवहार करेंगे जो हम लोगों के साथ करते हैं। उस व्यवहार की कल्पना करके ही मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

शारदा : और मैं उस व्यवहार की कल्पना करके शक्ति पाती हूं। यह सारी स्त्री-जाति के लिए चुनौती है। मैं निश्चय ही जेल जाऊंगी। इसमें सफलता नहीं मिली तो आत्महत्या कर लूंगी। लेकिन उस दमघोंटू वातावरण में फिर नहीं लौटूंगी।

विमल . वह तो ठीक है, लेकिन अपना घर छोड़कर रहोगी कहा?

शारदा : कहीं भी रह लूंगी। तुम जरा अपने-आप को मेरे स्थान पर रखकर सोचो। क्या मेरा वहां जाना माताजी के साथ ज्यादती न होगी? मैं अपना पथ छोड़ूंगी नहीं। और पिताजी उसे सह नहीं सकते। मां विचारी परेशान हो उठेंगी। नहीं-नहीं, मैं उस दमघोंटू वातावरण में नहीं

लौटूंगी ।

(एक वयोवृद्ध सज्जन का प्रवेश)

चन्द्रकिशोर : उस दमघोंटू वातावरण में वापस लौटने का अब कोई प्रश्न ही नहीं है ।

विमल : (चकित होकर) पिताजी, आप ?

शारदा : पिताजी, मैं नमस्कार करती हूं ।

चन्द्रकिशोर : जीती रहो बेटी । मेरे देश की दूसरी झांसी की रानी बनो । (विमल से) विमल बेटा, शारदा के पिताजी ने मेरी बात नहीं मानी। उन्होंने कहा, "मैं उसे अब घर में नहीं आने दूंगा । वह कहीं भी जाए, कुछ भी करे।" इस पर मैंने उनसे कह दिया, "अच्छा, यदि आपको कोई मतलब नहीं तो आज से वह मेरे घर की बहू हुई । मैं अभी उसके विवाह का प्रबन्ध करता हूं ।" आओ मेरे बच्चो, इससे पहले कि तुम फिर आज़ादी की लड़ाई में भाग लो, मैं तुम दोनों को एक सूत्र में बांध देना चाहता हूं । मेरे साथ आओ ।

विमल : (विमुग्ध-सा) पिताजी !

शारदा : आज से आप मेरे पिता हुए और मैं आपकी बेटी ।

(चन्द्रकिशोर दोनों के कन्धों पर हाथ रखकर उन्हें मंच से बाहर ले जाते हैं । एक क्षण बाद प्यारेलाल

बौखलाए हुए वहां आते हैं।)

प्यारेलाल : कहां गए वे लोग। मैं यह नहीं होने दूंगा। वह मेरी बेटी है। मैं उसका पिता हूं। मेरी बिना आज्ञा वह कुछ नहीं कर सकती। उसे वापस लौटना होगा। नहीं तो, नहीं तो मैं उसका गला घोंट दूंगा या फिर मैं जिन्दा नहीं रहूंगा।

(तेज़ी से उसी ओर चला जाता है। मंच पर फिर अन्धकार छा जाता है। दो क्षण बाद अग्रभाग में प्रकाश उभरने लगता है। तभी सूत्रधार और देवीप्रसाद दोनों मंच पर प्रवेश करते हैं।)

सूत्रधार : देखा तुमने। ये लोग भी क्रान्तिकारी थे। (हंसकर) समझ में नहीं आता क्रान्ति का कौन-सा रूप सही है। अब देखिए न, (देवीप्रसाद जैसे नहीं सुनता) अरे आप किस सोच में पड़ गए?

देवीप्रसाद : (चौंककर) ऐं, (मुस्कराता है) मैं इस लड़की से बहुत प्रभावित हुआ हूं लेकिन···

सूत्रधार : लेकिन क्या?

देवीप्रसाद : लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि इसे अपने पिता को साथ लेकर चलना चाहिए।

सूत्रधार : जो साथ न आए तो उसे कैसे साथ लिया जा सकता है?

देवीप्रसाद : इसमें साथ न आने की क्या बात थी? वह उन्हें

समझाती। जितने विश्वास से वह जनता से बातें करती थी, उतने ही विश्वास से यदि पिता से कहती तो शायद वे मान जाते। कम से कम मैं उनकी जगह होता तो बहुत खुश होता। आखिर मुझे लड़की के विवाह की परेशानियों से मुक्ति तो मिलती। तुम नहीं जानते, मैं अपनी लड़की के विवाह को लेकर कितना परेशान हूं। लेकिन मैं यह कभी नहीं स्वीकार कर सकता, कि मेरी आज्ञा के बिना वह कुछ करे। आखिर मैं पिता हूं। मेरे कुछ कर्तव्य हैं, अधिकार हैं। वे कर्तव्य और अधिकार मुझे इसीलिए तो प्राप्त हुए हैं कि मैं अधिक अनुभवी हूं। हर बुजुर्ग अनुभवी होता है।

सूत्रधार : जी हां, हर बुजुर्ग अनुभवी होता है। लेकिन मुसीबत यह है कि अनुभव और क्रान्ति की सदा अनबन रहती है। दोनों एक-दूसरे को फूटी आंखों नहीं सुहाते। अनुभव स्थापित सत्यों की रक्षा करता है लेकिन क्रान्ति नये सत्यों की खोज करती है। आपने देखा, किस तरह शारदा और विमल ने एक-दूसरे का होने की प्रतिज्ञा की। और वे सचमुच एक हो गए। उन्होंने सारा जीवन गांधीजी के आदेशानुसार देश को अर्पित

कर दिया। लेकिन एक समय आया जब उन्होंने भी अपने अनुभव का उपयोग स्थापित सत्यों की रक्षा करने में किया। नई पीढ़ी के शब्दों में कहूं तो उन्होंने क्रान्ति के विरुद्ध संघर्ष किया। वह देखो चक्र कितनी तेज़ी से घूम रहा है। हम अब सन् ४२ में पहुंच गए हैं। वह देखो मंच पर विमल कैसे घबराए हुए आ रहे हैं। यह वही विमल है, जिन्होंने जातीयता और प्रान्तीयता की दीवारें तोड़कर स्वतंत्रता के लिए घर से बाहर आने वाली लड़की शारदा से आगे बढ़कर विवाह किया। वही आज कितना परेशान है। आओ, आओ, हम दर्शक-दीर्घा में अपने स्थान पर लौट चलें।

(वे दोनों बाहर चले जाते हैं, प्रकाश पृष्ठभाग में उभरता है, विमल और शारदा द्वार से मंच पर प्रवेश करते हैं। शुद्ध खद्दर का परिधान है। दोनों बहुत परेशान हैं।)

शारदा : आखिर कहो भी हुआ क्या?

विमल : होने को रह क्या गया है। मेरी तो कुछ समझ में नहीं आता कि क्या करूं। तुम सुनोगी तो···

शारदा : सुनूंगी तो तब जब तुम कुछ बताओगे। तुम प्रदीप के बारे में तो कुछ नहीं कहना चाहते?

कहीं उसने कुछ कर तो नहीं डाला ?

विमल : करने को अब और क्या रह गया है।

शारदा : पर क्या किया उसने ? क्या वह अब भी जैनेट से शादी करने को वज़िद है।

विमल : वज़िद होने का अब कोई सवाल ही नहीं रहा। कल उसने कोर्ट में जाकर जैनेट से शादी कर ली।

शारदा : (हठात् कांपकर चौकी पर बैठ जाती है) क्या कहा, प्रदीप ने शादी कर ली है !

विमल : जी हां, जैनेट से शादी कर ली कोर्ट में जाकर, बिना हमको कोई सूचना दिए हुए। सुना तुमने —बिना हमको कोई सूचना दिए हुए (तेज़ी से इधर-उधर घूमता है। शारदा एक क्षण हत-प्रभ-सी शून्य में ताकती है)

शारदा : बिना हमको कोई सूचना दिए हुए प्रदीप ने कोर्ट में जाकर जैनेट से शादी कर ली !

विमल : हां, बिना हमको सूचना दिए हुए। उसने मुझसे कहा था कि मैं संयुक्त परिवार में नहीं रहना चाहता। मैंने उसकी बात मान ली थी। उसने मुझसे कहा था कि मैं अपनी इच्छा से शादी करूंगा। तुम जानती हो, मैंने उसका यह अधिकार भी स्वीकार कर लिया था। फिर उसने

कहा कि वह जैनेट से शादी करेगा। तुमने तो एक बार विरोध भी किया था, लेकिन मैंने उसकी इस बात को भी स्वीकार कर लिया था। मैंने धर्म और जाति की चिन्ता नही की थी। मैं उनमें विश्वास ही नहीं करता। मैं देश को सबसे ऊपर मानता हू। जैनेट इसी देश की लड़की है। बस मैंने उससे केवल इतना ही कहा था कि अपने परिवार और समाज की जो स्थिति है, उसको देखते हुए यह अच्छा होगा कि जैनेट को शुद्ध करके जाह्नवी बना लिया जाए। मुझे ये बातें अच्छी नही लगती। परन्तु जिस समाज मे हम रहते हैं, उसका भी तो ध्यान रखना होता है। उसे धीरे-धीरे हृदय-परिवर्तन के द्वारा ही तो बदलना होगा। हृदय-परिवर्तन के लिए मैं हज़ार वर्ष तक रुक सकता हू लेकिन जोर-ज़बर्दस्ती नही कर सकता। लेकिन उसने मेरी यह जरा-सी बात भी नही मानी।

शारदा : (रुंधा स्वर) मेरी तो बुद्धि काम नही कर रही है। क्या उसे कोई और लड़की नही मिलती थी। आखिर जैनेट छोटी जाति की लड़की ही तो है। उसके बाबा कोली थे। वह ईसाई बन गए। वह अब एक दफ्तर में काम करती है।

विमल : लेकिन मैंने तो यह बात भी स्वीकार कर ली कि दफ्तर में काम करने वाली छोटी जाति की एक ईसाई लड़की मेरी बहू बने, पर उसने मेरी कोई बात स्वीकार नहीं की। करता कैसे। वह मां-बाप को दकियानूसी जो समझता है।

शारदा : दकियानूसी, प्रतिक्रियावादी, पुरातन-पंथी, न जाने उसने क्या-क्या कहा। मैंने सब कुछ सुना। वह मेरा बेटा है। उसे मैं कितना प्यार करती हूं।

विमल : (तेज़ होकर) यही तो। तुम्हारे प्यार ने ही तो उसे बिगाड़ दिया। अगर तुमने समझाया होता...

शारदा : तुम समझते हो, मेरे समझाने पर वह मान जाता ? हरगिज़ नहीं। वह समझता है कि मैं एक खूसट बुढ़िया होती जा रही हूं। जितनी जल्दी चिता में भस्म हो जाऊं उतना ही अच्छा है।

विमल : लेकिन सुन लो, मैं इस तरह से नहीं मानूंगा। मैं कहे देता हूं कि मैं उसे इस घर में नहीं आने दूंगा। तुम कहोगी, तब भी नहीं आने दूंगा। बाहर लोग मेरा कितना आदर करते हैं। मेरी बात मानते हैं। मुझसे सलाह लेने के लिए आते

हैं। लेकिन मेरे घर में मेरा बेटा ही मेरी ज़रा-सी बात नहीं मानता।

शारदा : लेकिन वह है कहां ?

विमल : होता कहां। इसी शहर में है। अपने एक मित्र के घर ठहरा हुआ है। संदेशा आया है कि मिलने आ रहा हूं। उसका साहस तो देखो। मैं तुमसे यही कहने आया हूं कि अब उसकी मीठी-मीठी बातें सुनकर पिघल न जाना।

शारदा : लेकिन...

विमल : मैं अब लेकिन-वेकिन कुछ नहीं सुनूंगा। (बाहर की ओर देखकर) शायद वह आ रहा है। हां, वही है।

(प्रदीप और जैनेट दोनों मंच पर प्रवेश करते हैं। दोनों आधुनिक वेश-भूषा में हैं।)

प्रदीप : नमस्कार पिताजी। नमस्कार माताजी।

जैनेट : नमस्ते पिताजी। नमस्ते माताजी।

(कोई जवाब नहीं देता। वातावरण में तनाव उभरता है। विमल घूमते रहते हैं। शारदा बैठी रहती है। प्रदीप और जैनेट कभी उनको, कभी एक-दूसरे को देखते हैं। फिर सहसा शारदा बोलती है)

शारदा : प्रदीप, मेरे बेटे तुमने यह क्या किया ?

प्रदीप : शादी की है। सभी करते हैं। आप शायद

नाराज़ हो गई हैं। इसका कारण मैं जानता हूं। लेकिन विश्वास रखिए हम यहां रहने के लिए नहीं आए हैं। बस आपसे मिलने आए हैं। जैनेट की बड़ी इच्छा थी···

जैनेट : हां पिताजी, प्रदीप तो बड़े डर रहे थे। मैंने ही उनसे कहा, पिताजी कितने बड़े सुधारक हैं। वे निश्चय ही इनको क्षमा कर देंगे।

शारदा : (रुंधे कंठ से) हमें कोई ऐतराज़ थोड़े ही है। हम क्या दकियानूसी हैं? हमने तो सदा नये युग का स्वागत किया है। बल्कि हमने नये युग को लाने के लिए बराबर जी तोड़ कोशिश की है लेकिन तुम जानो, हर बात की सीमा होती है। फिर परिवार और समाज की बात है। उनको साथ लेकर चलने से ही बदला जा सकता है। जब तक उनके भीतर से हृदय-परिवर्तन की बात न उठे, तब तक हमें सावधानी से चलना चाहिए। इसलिए प्रदीप बेटा, तुम्हें अपने पिताजी की बात मान लेनी चाहिए। इसमें बिगड़ता ही क्या है। जैनेट तो जैनेट ही रहेगी।

प्रदीप : वही तो मैं कहता हूं। जैनेट को यदि शुद्ध करके जाह्नवी नाम दे दिया जाएगा तो क्या इसका कुछ बदल जाएगा? नाम बदल जाने से गुण

और दोष नहीं बदल जाते। बदल सकते तो आज हर बुरी चीज के अच्छे नाम रख दिए जाते। नहीं माताजी, मैं इस ढोंग में विश्वास नहीं करता। इस या उस धर्म में जाने से किसी-का स्वभाव नहीं बदल जाता। मेरा निश्चय है, जैनेट धर्म-परिवर्तन नहीं करेगी।

विमल : तो मेरा भी फैसला सुन लो। अगर वह धर्म-परिवर्तन नहीं करती, तो इस घर में तुम्हारे लिए कोई जगह नहीं है। कहां यह एक छोटी जाति की स्त्री और कहां हम क्षत्रियों में भी शीर्षस्थ। दूसरा कोई होता तो जान से मार डालता या खुद मर जाता। यह मेरी उदारता है कि उसे अपने कुल में लेने को तैयार हो गया और तू ज़रा-सी बात भी नहीं मान सकता। मेरा-तेरा अब कोई सम्बन्ध नहीं है।

प्रदीप : सम्बन्ध रखना जितना आपके अधिकार में है, उतना ही मेरे में भी है। पर मैं इस बात को लेकर झगड़ा नहीं करूंगा। हां, यह अवश्य पूछूंगा कि आप किस बात में ऊंचे हैं। जैनेट मां से अधिक पढ़ी-लिखी है, सुन्दर है, साहसी है।

विमल : कुल का सम्बन्ध केवल शिक्षा और रूप से नहीं है। वह आत्मा का सम्बन्ध है।

प्रदीप : शुद्ध हो जाने से क्या आत्मा ऊंची हो जाएगी ?

विमल : (तिलमिलाकर) हां, हो जाएगी।

प्रदीप : अगर इसी तरह आत्मा ऊंची होती है, तो जेलों का ठेका क्यों नहीं ले लेते। वहां के सभी अपराधियों को शुद्ध करके आप उनकी आत्माओं को पवित्र बना सकते हैं।

विमल : (चीखकर) दुष्ट, तू मेरा मज़ाक उड़ाता है! मेरा ही बेटा होकर मेरे साथ परिहास करता है। बेशर्म! आज से तू मेरे लिए मर गया। मैं अपनी जायदाद में से तुझे कोई हिस्सा नहीं दूंगा।

प्रदीप : मैं जायदाद में से हिस्सा मांगने नहीं आया। मुझे उसकी ज़रूरत नहीं है। और ज़रूरत भी होगी तो मांगूंगा नहीं। अधिकार से लूंगा। मैं समझौता करना नहीं चाहता। आप यदि हमसे बात करना नहीं चाहते तो मैं चला जाता हूं। आओ जैनेट, मैं अब यहां एक क्षण भी नहीं रुक सकता।

जैनेट : ज़रा रुको, इतने उतावले मत बनो।

शारदा : (प्रार्थना के स्वर में) जैनेट बेटी, तुम्हीं इसे समझाओ। तुम तो इस बात को समझती हो।

जैनेट : मैं सब समझती हूं माताजी। लेकिन यदि आप जैसी मैं हूं वैसी ही को स्वीकार नहीं करती तो मैं भी इनको यहां रहने के लिए कैसे कह सकती हूं?

(सहसा सुरेखा का प्रवेश)

सुरेखा : (पुकारती हुई आती है) माताजी, माताजी, आपने सुना···अरे ये तो प्रदीप भैया हैं। आप तो यहां पहले से ही मौजूद हैं और यह कौन है···ओह! आप हैं जैनेट भाभी। बड़े बुरे हो भैया, हमसे पूछा भी नहीं। चुपचाप विवाह करके ले आए।

विमल : (तेज होकर) सुरेखा, तुम अन्दर जाओ।

सुरेखा : आप नाराज हैं शायद पिताजी? लेकिन भैया ने कुछ बुरा तो नहीं किया। आप शुद्धि ही तो चाहते थे। उससे क्या होता है। हमें तो यह अच्छा नहीं लगता।

शारदा : तुझे क्या अच्छा लगता है और क्या नहीं लगता, इसकी हमें चिन्ता नहीं। आजकल सभी बढ़-बढ़कर बोलने लगे हैं और आदर्श बघारने लगे हैं। लेकिन जब सहना पडता है, तब पता लगता है।

सुरेखा : बिना सहे क्या कुछ होता है, माताजी? और

प्रदीप : शुद्ध हो जाने से क्या आत्मा ऊंची हो जाएगी ?

विमल : (तिलमिलाकर) हां, हो जाएगी।

प्रदीप : अगर इसी तरह आत्मा ऊंची होती है, तो जेलों का ठेका क्यों नहीं ले लेते। वहां के सभी अपराधियों को शुद्ध करके आप उनकी आत्माओं को पवित्र वना सकते हैं।

विमल : (चीखकर) दुष्ट, तू मेरा मज़ाक उड़ाता है ! मेरा ही वेटा होकर मेरे साथ परिहास करता है। वेशर्म ! आज से तू मेरे लिए मर गया। मैं अपनी जायदाद में से तुझे कोई हिस्सा नहीं दूंगा।

प्रदीप : मैं जायदाद में से हिस्सा मांगने नहीं आया। मुझे उसकी ज़रूरत नहीं है। और ज़रूरत भी होगी तो मांगूंगा नहीं। अधिकार से लूंगा। मैं समझौता करना नहीं चाहता। आप यदि हमसे वात करना नहीं चाहते तो मैं चला जाता हूं। आओ जैनेट, मैं अव यहां एक क्षण भी नहीं रुक सकता।

जैनेट : ज़रा रुको, इतने उतावले मत वनो।

शारदा : (प्रार्थना के स्वर में) जैनेट वेटी, तुम्हीं इसे समझाओ। तुम तो इस वात को समझती हो।

जैनेट : मैं सब समझती हूं माताजी। लेकिन यदि आप जैसी मैं हूं वैसी ही को स्वीकार नहीं करतीं तो मैं भी इनको यहां रहने के लिए कैसे कह सकती हूं ?

(सहसा सुरेखा का प्रवेश)

सुरेखा : (पुकारती हुई आती है) माताजी, माताजी, आपने सुना···अरे ये तो प्रदीप भैया हैं। आप तो यहां पहले से ही मौजूद हैं और यह कौन है···ओह ! आप हैं जैनेट भाभी। बड़े बुरे हो भैया, हमसे पूछा भी नहीं। चुपचाप विवाह करके ले आए।

विमल : (तेज होकर) सुरेखा, तुम अन्दर जाओ।

सुरेखा : आप नाराज हैं शायद पिताजी ? लेकिन भैया ने कुछ बुरा तो नहीं किया। आप शुद्धि ही तो चाहते थे। उससे क्या होता है। हमें तो यह अच्छा नहीं लगता।

शारदा : तुझे क्या अच्छा लगता है और क्या नहीं लगता, इनकी हमें चिन्ता नहीं। आजकल सभी बढ़-बढ़कर बोलने लगे हैं और आदर्श बघारने लगे हैं। लेकिन जब सहना पड़ता है, तब पता [illegible] है।

सुरेखा : बिना सहे क्या कुछ होता है, माताजी [illegible]

(लपककर उसे गले लगा लेती है। फिर दोनों बाहर चले जाते हैं। एक क्षण वहां सन्नाटा छाया रहता है। उसके बाद शारदा बोलती है।)

शारदा : गए। ओह ! यह सब क्या हो गया ? मुझे ऐसा लग रहा है जैसे मैं सपना देख रही थी। जैसे यह सुरेखा नहीं थी, मैं ही थी। मैंने भी तो एक दिन इसी स्वर में···

विमल : यह सुनते-सुनते मैं परेशान हो गया। इस स्वर का प्रयोग जब तुमने किया था तो उसकी ज़रूरत थी। आज नारी स्वतंत्र है लेकिन इस स्वतंत्रता का यह अर्थ तो नहीं है कि वह हरजाई हो जाए।

शारदा : मेरा यह मतलब नहीं, लेकिन फिर भी वह मेरे बेटे की बहू है। तुम उसे एक बार बुलाओ तो। मैं बहू को कुछ···

विमल : (चीखकर) नहीं, मैं किसीको नहीं बुलाऊंगा। तुम्हें जाना है तो जा सकती हो। तुम उसे अपना घर सौंपना चाहती हो तो सौंप सकती हो।
(तेज़ी से अन्दर की ओर चला जाता है)

शारदा : (पीछे जाती है) मैं तुम्हारे बिना कहीं नहीं जा सकती, कुछ नहीं कर सकती। शायद मेरी बेटी सुरेखा यह साहस कर सके। पता नहीं···

(चली जाती है। मंच पर केवल सुरेखा रह जाती है। वह जैसे किसी स्वप्न में जागती है।)

सुरेखा : मां सब कुछ समझती है। समझते पिताजी भी हैं। लेकिन परिवार में रहने का भय और अपने अन्तर का अहम् उन्हें गुमराह किए हुए हैं। आदमी अपने अहम् से कब मुक्ति पाएगा।

(वह भी पीछे-पीछे चली जाती है। उस भाग पर फिर अन्धकार छा जाता है और अग्रभाग में प्रकाश उभरता है। सूत्रधार और देवीप्रसाद दोनों मंच पर आते हैं।)

सूत्रधार : देखा तुमने। प्रदीप और जैनेट कितने आवेग में थे। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि वे घर नहीं लौटेंगे और पिता ने प्रतिज्ञा की थी कि वह उन्हें घर में नहीं आने देगा। लेकिन यह देखो, समय का चक्र कितनी तेजी से घूम रहा है।

देवीप्रसाद : (खोया-खोया-सा) ऐं! तुम क्या कह रहे हो?

सूत्रधार : मैं कह रहा हूं श्रीमान्, कि समय का चक्र बड़ी तेजी से घूम रहा है। पच्चीस वर्ष बीत चुके हैं। प्रदीप और जैनेट फिर इसी घर में लौट आए हैं। कब और कैसे लौटे, कुछ पता है?

देवीप्रसाद : (खोया-खोया-सा) जी हां, मुझे मालूम है, वह कब और कैसे लौटे। मैं यह भी जानता हूं कि

है। ना-ना, यह कोई और अन्विता होगी।

प्रदीप : (फीकी हंसी) तुमको अब भी शक है ?

जैनेट : मगर उसने तो दीपक से शादी करने का निश्चय किया था और इस निमंत्रण-पत्र में नेलसन का नाम लिखा है। यह कहां से आ गया ? नो-नो डियर ! आपको गलतफहमी हुई है। यह कोई और अन्विता है।

प्रदीप : अपने को धोखा मत दो जैनेट।

जैनेट : लेकिन मैं मान भी कैसे लूं। पिछले हफ्ते ही तो वह यहां आई थी। उसने मुझसे कुछ भी तो नहीं कहा था।

प्रदीप : लेकिन मुझसे कहा था। तब मैं नहीं जानता था कि वह इतना आगे बढ़ गई है। मैंने उससे कह दिया था कि वह उसका अपना मामला है। हमें दखल देने का कोई अधिकार नहीं। लेकिन एक बार जो वचन दिया जा चुका है, उसे बिना किसी कारण तोड़ देना भी उचित नहीं।

जैनेट : (बेचैन होकर) पर प्रदीप ! तुमने मुझसे तो कुछ भी नहीं कहा। क्यों नहीं कहा ? मैं अभी उसके पास जाऊंगी।

प्रदीप : तुम कहीं नहीं जाओगी। जाने से कोई लाभ नहीं होगा। ज़रूरत भी नहीं है। मैं तो केवल

दौलत की बात सोचता हूं। मैंने उससे कहा कि दौलत को योरोप से लौट आने दो। वह बोली, "मैंने उसे लिख दिया है।" मैंने उससे कहा कि ऐसे कामों में जल्दी करना अच्छा नहीं। वह बोली, "इन्सान को इतना कमजोर [illegible] नहीं होना चाहिए। जो सोचा उसे [illegible] बस।"

जैनेट : लेकिन फिर भी कुछ [illegible]

प्रदीप : सुना है कोई [illegible] योरोप जा रहे हैं

जैनेट : (सोचते-सोचते-सी) [illegible] क्या अब कोई मुश्किल नहीं [illegible]

प्रदीप : मुश्किल तो है [illegible]

जैनेट : मुझे लगता है कि कुछ [illegible] बेकार हो गए हैं।

(अनिरुद्ध का [illegible] आधुनिक युवक)

अनिरुद्ध : [illegible] सुना है आप फिर [illegible] है। सुनकर मुझे बहुत खुशी हुई। सभी समझदार लोगों को [illegible] के साथ रहना चाहिए। (रुककर) लेकिन यह क्या ? आप [illegible] मौन और उदास क्यों पड़े हैं ?

और ममी, आप भी चुप हैं। क्या आप पिताजी के शासक दल में लौट आने से खुश नहीं ?

जैनेट : (अनसुना करके) तूने सुना अनिरुद्ध, अन्विता किसी स्वीड चित्रकार से शादी कर रही है।

अनिरुद्ध : हां, सुना तो है।

जैनेट : लेकिन वह तो दीपक से बेहद प्यार करती थी।

अनिरुद्ध : तो क्या हुआ ? कल दीपक से प्यार करती थी, आज नेलसन से करती है। असल बात प्यार करने की है, सो वह करती है। व्यक्ति कोई भी हो सकता है। इस बात को लेकर आप इतने परेशान क्यों हैं ? आपकी तो कोई ज़िम्मेदारी नहीं है।

प्रदीप : (क्रुद्ध होकर) मैं ज़िम्मेदारी की बात नहीं कहता। लेकिन आदमी की कुछ मान्यताएं होती हैं, कुछ मूल्य होते हैं।

अनिरुद्ध : सब कुछ होता है। लेकिन वह स्थिर नहीं होता, बदलता रहता है।

जैनेट : बेटे ! अगर मूल्य इसी तरह बदलते रहे तो समाज कैसे चलेगा ?

अनिरुद्ध : जैसे आज चल रहा है। उसे चलने से कौन रोक सकता है। आप लोग व्यर्थ ही उसकी गति रुकने की कल्पना करते रहते हैं।

जैनेट : हां, हम किसीको चलने से कैसे रोक सकते हैं। हम तो केवल तुम्हारी भलाई के लिए कहते हैं।

अनिरुद्ध : जिसे तुम भलाई कहती हो, वही तुम्हारा स्वार्थ है। तुम सब कुछ अपनी ही दृष्टि से देखना, सुनना और करना चाहती हो। तुम चाहती हो कि वही मूल्य समाज में मान्य हों जिनको तुमने जिया है।

(दूर से रिता की आवाज आती है।)

रिता : अनि डार्लिंग, तुम कहां हो ?

अनिरुद्ध : (बाहर की ओर देखकर) रिता डियर, मैं यहां हूं। चली आओ।

रिता : (मंच पर आकर) शैतान कहीं के, मुझे पीछे ही छोड़ आए। यू नाटी बॉय ! यू आर'''

अनिरुद्ध : आई एम सो सॉरी डियर। हां, देखो डियर, मीट माई डैडी ऐण्ड ममी। डैडी, यह रिता है। मेरी नई संगिनी। इसके पिता बंगाली ब्राह्मण हैं और मां डच। और ममी, यह बड़ी ही प्रतिभाशालिनी चित्रकार है। नेलसन को इसीने तो अन्विता से 'इण्ट्रोड्यूस' कराया था। इसके चित्रों की प्रदर्शनी तो आपने देखी होगी ?

जैनेट : चित्रों की बात अभी रहने दो। पहले मुझे यह बताओ कि श्यामला का क्या हुआ। पिछले

हफ्ते तक तो तुम उसीके साथ रहते थे।

प्रदीप : (व्यंग्य से) और उससे पहले सुमेधा थी।

अनिरुद्ध : (मूक हंसी) और उससे पहले सविता थी। सविता से पहले नंदिता थी। और उससे पहले ···जाने दीजिए, नाम गिनवाने से क्या होगा। मुझे आश्चर्य इसी बात का है कि आपको मेरी इस बात से आश्चर्य हुआ। देखिए न डैडी, आप पहले गणतन्त्र दल में थे, फिर जनतन्त्र में आए, उसके बाद जन-क्रान्ति में गए। अब फिर दक्षिण-पंथी गणतन्त्र में जा मिले। पिताजी सिद्धान्त के नाम पर दल बदलते हैं। बेटा प्रेम के नाम पर संगिनी बदलता है।

प्रदीप : (तीव्र स्वर) बकवास बन्द करो। यह राज-नीति की बात है।

अनिरुद्ध : और यह प्रेम की। प्रेम हर हालत में राजनीति से बेहतर है···आपका क्रोध बढ़ रहा है। देखिए डैडी, इसमें क्रुद्ध होने की कोई बात नहीं। सुमेधा से मैंने विवाह किया था, लेकिन नहीं निभ सकी। उसके बाल बेशक काले और घुटनों के नीचे तक आते थे, परन्तु उसकी बुद्धि बौनी ही रह गई थी। और डैडी, सच बात तो यह है, मैं विवाह में विश्वास ही नहीं करता।

कीजिएगा, मैं बीच में बोल रही हूं। हर स्त्री की बात आप कैसे कह सकती हैं? आप अपनी पीढ़ी की बात कहिए।

जैनेट : स्त्री सदा स्त्री है। पीढ़ियां उसके स्वभाव में परिवर्तन नहीं कर सकतीं। हमारे पुरखे मूर्ख नहीं थे। लाखों वर्षों के अनुभवों के बाद उन्होंने विवाह-संस्कार को स्वीकार किया था। संगिनी रखना तो ऐसे ही हुआ जैसे कोई रखेल रख ले।

रिता : (कानों पर हाथ रखकर) ओह गॉड! आपके विचार कितने दकियानूसी हैं। मैं कहती हूं, मुझे अनिरुद्ध अच्छे लगते हैं। मेरा मन उनके साथ रहने को करता है। मैं रहती हूं। जब तक हम एक दूसरे को प्रेम कर सकेंगे, रहेंगे। नहीं क सकेंगे तो अलग हो जाएंगे।

अनिरुद्ध : हां ममी। रिता ठीक कहती है। विवाह के मंत्र या मजिस्ट्रेट के सर्टिफिकेट से स्त्री-पुरुषों के सम्बन्धों में कोई अन्तर नहीं पड़ता। और यदि यह आवश्यक भी हो, तो यह काम बुढ़ापे में हो सकता है। क्योंकि तब साथी बदलना सम्भव नहीं है। लेकिन जब तक हम युवा हैं, हमें प्रेम चाहिए। प्रेम करने के लिए सर्टिफिकेट की आवश्यकता नहीं होती। प्रेम मुक्ति में है, बंधन

में नहीं। विवाह स्त्री की गुलामी का पट्टा है, इसलिए बन्धन है।

प्रदीप : (तीव्र स्वर) बन्द करो यह बकवास। तुम्हें ऐसा कहते शर्म नहीं आती! तुम्हारी आत्मा तुम्हें जरा भी नहीं धिक्कारती।

रिता : हम लोग आत्मा को मानते ही नहीं। फिर उसके धिक्कारने का प्रश्न कहां उठता है।

प्रदीप : (चीखकर) तुम किसी को मानो या न मानो, लेकिन भगवान के लिए मुझे अब और भाषण मत दो।

अनिरुद्ध : आप सचमुच नाराज हो गए डैडी। आप जो चाहें मानें, मैं आपत्ति करने वाला कौन हूं। मैं तो केवल रिता को इण्ट्रोड्यूस कराने आया था। आप नहीं चाहते तो न सही। चलो रिता डियर, चलें।

जैनेट : जाने से मैं तुमको कभी नहीं रोक सकती। आज तो एक ही बात कह सकती हूं कि जब तुम्हारे सन्तान होगी, तब तुमसे पूछूंगी

रिता : (दोनों कानों पर हाथ रखकर) ओह माई गॉड! आपको भविष्य की बड़ी चिन्ता है। लेकिन हमें नहीं है। हम स्वयं उसके निर्माता हैं। हम नहीं चाहेंगे तो सन्तान कैसे हो जाएगी?

और जब चाहेंगे तो उसके वर्तमान पर अपने अतीत को नहीं लादेंगे।

जैनेट : देखूंगी।

प्रदीप : ओह जैनेट ! इन लोगों को जाने दो। नहीं तो मेरा दिमाग खराब हो जाएगा। और अनिरुद्ध ! सुनते जाओ, मुझे अब और किसी रोमा, रूबी, जुबेदा या जूडी से 'इण्ट्रोड्यूस' होने की ज़रूरत नहीं।

अनिरुद्ध : मुझे भी नहीं है। चलो रिता।

रिता : चलो।

(दोनों दाहिनी ओर से बाहर जाने को मुड़ते हैं, तभी द्वार पर अन्विता दिखाई देती है)

अन्विता : हलो भैया ! और तुम भी हो रिता ? लेकिन तुम दोनों जा कहां रहे हो ? क्या डैडी से फिर वाक्-युद्ध हो गया ?

अनिरुद्ध : और उनके साथ हो ही क्या सकता है।

अन्विता : (हंसकर) यह तो इस युग की सबसे बड़ी देन है। इसके बिना गति भी तो नहीं है। अच्छा तुम हमारी शादी में आओगे। तुम्हें भी आना है रिता डियर।

रिता : हां-हां, हम लोग अवश्य आएंगे। टा···टा···

अन्विता : टा···टा···रिता डियर, टा···टा···भैया।

(दोनों बाहर चले आते हैं। अन्विता आगे बढ़कर वहाँ आ जाती है जहाँ प्रदीप और जैनेट खड़े बातें कर रहे हैं।)

अन्विता : हलो डैडी, हलो ममी।

जैनेट : अरे तुम आ गईं अन्विता, मैं तुम्हारी याद ही कर रही थी।

अन्विता : देख लो ममी, तुमने याद किया और मैं आ गई। फिर न कहना कि मैं तुमसे प्यार नहीं करती। (हंसती है) लेकिन मैंने तो सुना है, आप मुझसे बहुत नाराज हैं। हमारे विवाह में भी शामिल नहीं हो रहे। (नाटकीय निश्वास खींचकर) आपकी इच्छा है। नेलसन तो यही चाहता है कि ··

प्रदीप : चाहने की बात बिलकुल व्यर्थ है। तुम लोग हमारी चिन्ता क्यों करते हो ? हम पुराने जमाने के लोग हैं। दकियानूसी, पुरातन-पंथी।

अन्विता : पुरानी पीढ़ी के लोग पुरातन-पंथी ही तो हो सकते हैं। लेकिन मैं आपसे झगड़ा करने नहीं आई। आप अपने रास्ते पर चलने के लिए स्वतन्त्र हैं। परन्तु डैडी, दुनिया बहुत तेजी से आगे बढ़ रही है। हम अगर समय के साथ नहीं चलेंगे, तो पिछड़ जाएंगे। बीता हुआ हर क्षण

मर जाता है। और जो उसके पीछे भागते रहते हैं वे भी फॉसिल बनकर रह जाते हैं…

प्रदीप : (एकदम) ओह ! भाषण-भाषण ! तुमने अभी इस जग को देखा कितना है ? अभी तक पढ़ा ही पढ़ा है। भाषण सुने हैं, नारे लगाए हैं, बाप की आमदनी पर आराम की जिन्दगी गुज़ारी है। जब इस जग की भूल-भुलैयां में फंसकर जहर-भरे घूंट पियोगी, कड़वे-मीठे अनुभव पाओगी, तब कहीं मुझे चुनौती देने लायक होगी।

अन्विता : चुनौती बुढ़ापा नहीं, जवानी देती है। बुढ़ापा समझौता करता है या हठ करता है।

प्रदीप : हठ तो जवानी भी करती है।

अन्विता : पर समझौते के लिए नहीं, स्थिर मूल्यों की रक्षा के लिए भी नहीं। खोज के लिए, नये मूल्यों की स्थापना के लिए। जिस क्षण जवानी नये मूल्यों की खोज से गुरेज करेगी, उस क्षण क्रान्ति रुक जाएगी।

(सुरेखा का प्रवेश)

सुरेखा : यह कौन भाषण दे रहा है। ओह ! अन्विता है। देखती हूं बड़ी बुद्धिमान हो गई है।

अन्विता : हलो आण्टी, आप कैसी हैं ?

सुरेखा : जैसे पुरानी पीढ़ी के लोग हुआ करते हैं। बीते

हुए क्षण के पीछे भाग रही हूं। पिछड़ गई हूं। लेकिन बेटी ? इस समय तो युग बहुत तेज़ी से दौड़ रहा है। मुझे पिछड़ने में २०-२५ वर्ष लग गए थे। लेकिन तुम तो दो वर्ष में ही पिछड़ गई हो।

अन्विता : (चकित होकर) मैं पिछड़ गई हूं ? (हंसकर) यह कैसे बुआजी ?

सुरेखा : (हसती है) पहले तुमने मुझे आण्टी कहा और अब बुआजी। क्या यह पिछड़ापन नहीं है। (सब हंस पड़ते हैं) लेकिन और बताती हूं। तुम्हारी आयु क्या है ?

अन्विता : २६ वर्ष।

सुरेखा : और अनिरुद्ध की ?

अन्विता : २४ वर्ष।

सुरेखा : तुम विवाह में विश्वास करती हो, क्योंकि विवाह करने जा रही हो।

अन्विता : निश्चय ही करती हूं। लेकिन इससे क्या ?

सुरेखा : अभी बताती हूं। तुम्हारा भाई अनिरुद्ध तुमसे दो वर्ष छोटा है। उसने दो वर्ष में तीन संगिनियां बदली। केवल स्त्री और पुरुष की सत्ता में विश्वास करता है यानी नर-मादा की सत्ता में। (ज़ोर से हंसती है) कहो तुम पिछड़ गई न।

प्रतिक्रियावादी हुई न ? अनिरुद्ध तुमको दकिया-नूसी और पुरातनपंथी कह सकता है।

अन्विता : (परेशान होकर) अपने-अपने विचार हैं। और मैं भी नेलसन से बंध नहीं गई हूं। जिस क्षण चाहूंगी, अलग हो जाऊंगी।

सुरेखा : वही तो अनिरुद्ध कहता है। अलग ही होना है तो बंधें क्यों ?

अन्विता : ठीक है लेकिन…

सुरेखा : यही 'लेकिन' सब खुराफातों की जड़ है। यही मनुष्य का अहम् है और यही उसकी दुर्बलता। (हंसती है)

अन्विता : (तेज़ होकर) मैं जाती हूं।

सुरेखा : अरे, अरे, मैं भी आ रही हूं। मैं तुम्हारी शादी में शामिल होऊंगी। मैं तुम्हारे साथ हूं। (अन्विता नहीं रुकती। सुरेखा पीछे जाती है। प्रदीप मानो कहीं खो गया था, अब जैसे गहरी नींद से जागता है)

प्रदीप : प्रतिक्रियावादी, दकियानूसी, प्रगति, स्वतन्त्रता, मुक्ति—ये सब शब्द हैं। 'लेकिन' भी एक शब्द है। परन्तु यह उन सब बड़े-बड़े शब्दों को अर्थ-हीन कर देता है। (सहसा हंस पड़ता है)

जैनेट : तुम इतने ज़ोर से क्यों हंसते हो ? मेरा दिल

घबराता है। आज बेटा और बेटी दोनों नाराज होकर चले गए।

प्रदीप : लेकिन मैं तो नाराज़ नहीं हूं। तुम्हें मुझसे मतलब है। (शरारत से) वैसे एक दिन जब तुम्हारे भी प्रेमी थे, तब तुम भी घुमा-फिराकर कुछ ऐसी ही बातें किया करती थीं।

जैनेट : मुझे चिढ़ाने की कोशिश मत करो। तुम्हारी प्रेमिकाओं को भी मैं जानती थी।

प्रदीप : तुम्हारे प्रेमी और मेरी प्रेमिकाएं सब समाप्त हो गए। रह गए हम दोनों। इतना तो तुम मानोगी?

जैनेट : जवानी की उन बातों को जाने दो। हम दोनों हमेशा ही एक-दूसरे के होकर रहे हैं।

प्रदीप : आज तो विशेष रूप से हैं। क्यों, क्यों हैं, जानती हो? अनिरुद्ध के दर्शनशास्त्र के अनुसार तुम स्त्री और मैं पुरुष, तुम मादा और मैं नर।

जैनेट : हम दोनों नर-मादा हो सकते हैं लेकिन काल और आयु के बन्धन से मुक्त नहीं हैं। हम बूढ़े हो रहे हैं। हमें एक-दूसरे की जरूरत है।

प्रदीप : मैं ठीक यही कहने जा रहा था। यह 'लेकिन' शब्द बुढ़ापे की ही निशानी है। शंका और दुर्बलता इसीके दूसरे नाम हैं। हम दुर्बल

हो गए हैं। हमें सहारे की आवश्यकता है। नियम और बंधन उसी सहारे के दूसरे नाम हैं। सन्तान भी वही सहारा है। यह सहारा ही हमको प्रतिक्रियावादी और दकियानूसी बनाता है। लेकिन नहीं जैनेट, हम अब भी काल और आयु से लड़ेंगे।

जैनेट : (सहसा गम्भीर होकर) तुम लड़ते रहो। मुझे अब काम पर जाना है। तैयार भी होना है। मैं जाती हूं। (तेज़ी से अन्दर चली जाती है)

प्रदीप : सुनो जैनेट, सुनो ! मुझे ऐसा लगता है कि जैसे हम निरन्तर लड़ते आए हैं···अरे तुम तो सचमुच चली गईं। जाओ। लेकिन यह संघर्ष कभी नहीं रुका। रुकेगा भी नहीं। जैसे अन्विता और अनिरुद्ध हम ही हैं। जब मैं उससे विवाद कर रहा था, तो मुझे लग रहा था कि जैसे मैं स्वयं अपने आप को उत्तर दे रहा हूं। जैसे मेरे सामने अनिरुद्ध नहीं है, मैं ही अपने विरुद्ध खड़ा हूं।

(वह भी अन्दर चला जाता है। मंच के उस भाग पर अंधकार उतरता है। अग्रभाग पर प्रकाश चमकता है। सूत्रधार और देवीप्रसाद दोनों मंच पर आते हैं। देवीप्रसाद जैसे एकदम कहीं खो गया है।)

सूत्रधार : प्रदीप ने यह बात बिल्कुल ठीक कही है। जब

पुत्र पिता के विरुद्ध खड़ा होता है, तो वह स्वयं पिता का ही नवीन संस्करण होता है। नहीं होता ?

देवीप्रसाद : (खोया-खोया-सा) लेकिन मेरी कुछ समझ में नहीं आता। मुझे लगता है जैसे मैं स्वप्न देख रहा हूं। जैसे यह सब मात्र एक नाटक था। सच, नहीं था क्या ? क्या तुम विश्वास करते हो कि आज की दुनिया में ऐसा होता है ?

सूत्रधार : होता है तभी तो तुम देख सके हो।

देवीप्रसाद : नहीं, नहीं, यह सब छल है। छलावा है। ऐसा नहीं होता। जैसा कि मैंने कहा था मेरे भी एक लड़की है ज्योत्स्ना। मैंने उसे ऊंची से ऊंची शिक्षा दी। लेकिन मैं उसके लिए योग्य वर की तलाश नहीं कर सका। जो हैं वे कीमत मांगते हैं। सब कुछ व्यापार है।

सूत्रधार : (ज़ोर से हंसता है) और मैंने भी कहा था न कि तुम भी मेरे इस नाटक के एक पात्र हो (सूत्रधार उसे खींचता हुआ पृष्ठभाग में द्वार के पास ले जाता है। वहां प्रकाश उभरता है) यहां खड़े होकर अब तुम अपनी कहानी कहो। तुम्हारे एक लड़की है। तुमने उसे ऊंची से ऊंची शिक्षा दी है। लेकिन तुम उसके लिए योग्य

की जरूरत नहीं। अब तुम चैन की बंसी बजा सकते हो।

देवीप्रसाद : क्यों, क्या हुआ? तुमने तलाश कर लिया?

स्त्री : मैं क्या कर सकती थी। जिसे जरूरत थी, उसने कर लिया। ज्योत्स्ना ने विवाह कर लिया है।

देवीप्रसाद : (कांपकर) विवाह कर लिया है? किससे किया, कब किया? किससे पूछकर किया, मेरे रहते यह सब कैसे हुआ? वह कौन है जिसने उसे फुसलाया?

स्त्री : वह एक युवक ही है। उसीके कालेज में पढ़ता था। दोनों ने कल कोर्ट में जाकर विवाह किया है। यह देखो पत्र।

देवीप्रसाद : देखूं (पत्र लेकर पढ़ता है) "मेरा जाना आपको बुरा लगेगा। मुझे भी अच्छा नहीं लगता। लेकिन जाए बिना मुक्ति भी तो नहीं है। मुझे जाना ही चाहिए। मेरा धर्म मुझे उधर खींच रहा है। आप लोग अब तक मुझे यही समझाते आ रहे थे कि मैं अपना भविष्य आप बनाने में असमर्थ हूं, कि हर बेटा-बेटी असमर्थ होता है। कभी होता होगा। लेकिन अब तो मैं भी इन्सान हूं। मेरी कामनाएं हैं, तमन्नाएं हैं, आरज़ूएं हैं। उन्हें पूरी करने का मेरा जन्म-सिद्ध अधिकार है।

इस अधिकार को मैं किसी धर्म के नाम पर नहीं छोड़ सकती। ऐसा करना अपने को धोखा देना होगा। और अपने को धोखा देकर जीना नहीं हो सकता। इसलिए मैं अब इस अन्धकार में रहने का पाप क्यों करूं? लेकिन जाते-जाते यह विश्वास दिलाती हूं कि मैं आपकी ही बेटी हूं। मेरे इस कार्य से आप भार-मुक्त होंगे। सोचिए तो आप कब से तिल-तिल करके घुल रहे थे। अब आप सुख की नींद सो सकते हैं।" (एक-क्षण स्तब्ध-से दोनों एक-दूसरे को देखते हैं) सोचता हूं, कुछ बुरा तो नहीं हुआ। (कहते-कहते सहसा वहां पर पड़ी हुई चौकी पर लेट जाता है) यहां बड़ी शान्ति है। सचमुच मुझे लगता है जैसे सर पर से कोई बड़ा बोझ उतर गया है। बहुत अच्छा लगता है मन को। जितना चाहूं उतनी दूर तक उड़ सकता हूं। सोचता हूं अब कुछ देर सो लिया जाए।

स्त्री : (हतप्रभ) तुम सोना चाहते हो। कुल की नाक कट गई और तुम्हें नींद आ रही है। क्या तुम उसके पास नहीं जाओगे?

देवीप्रसाद : जाऊंगा, लेकिन आज नहीं। आज तो मुझे बड़े ज़ोर की नींद आ रही है (नाक को छूकर) और

मेरी नाक भी अभी सही-सलामत है।

(आंखें मींच लेता है और तुरन्त खर्राटे भरने लगता है। स्त्री पागल-सी उसे देखती है। सूत्रधार बड़े ज़ोर से हंसता है।)

सूत्रधार : खूब! नाटक के इस अन्त की तो मैंने कल्पना भी नहीं की थी। अब लगता है, सचमुच ही क्रान्ति द्वार खटखटा रही है। (स्त्री से) इन्हें सोने दीजिए। बेचारे जैसे वर्षों से न सोए हों। आइए हम लोग चलें। (स्त्री झिझकती है) आइए न, यहां इन्हें कोई परेशान नहीं करेगा।

(स्त्री चित्र-लिखित-सी पीछे-पीछे मंच से बाहर चली जाती है। तभी अन्दर से एक-एक करके सभी पात्र मंच पर आ जाते हैं। वे अचरज से सोते हुए देवीप्रसाद को देखते हैं।)

एक पात्र : यह कौन है?

दूसरा पात्र : यह भी शायद इस नाटक का कोई पात्र ही है। पर हमारी इस स्क्रिप्ट में तो इसकी कोई चर्चा नहीं है। नाटक के अन्त के बारे में अभी लेखक से साथ विचार करना है। (सूत्रधार का प्रवेश)

सूत्रधार . लेकिन अब उसकी कोई जरूरत नहीं। हमें वास्तविक जीवन का एक पात्र मिल गया है। तुम्हारा क्या ख्याल है? इसमें बढ़िया अन्त हो

इस अधिकार को मैं किसी धर्म के नाम पर नहीं छोड़ सकती। ऐसा करना अपने को धोखा देना होगा। और अपने को धोखा देकर जीना नहीं हो सकता। इसलिए मैं अब इस अन्धकार में रहने का पाप क्यों करूं? लेकिन जाते-जाते यह विश्वास दिलाती हूं कि मैं आपकी ही बेटी हूं। मेरे इस कार्य से आप भार-मुक्त होंगे। क्योंकि तो आप कब से तिल-तिल करके घुल रहे थे। अब आप सुख की नींद सो सकते हैं।" (एक क्षण स्तब्ध-से दोनों एक-दूसरे को देखते हैं) सोचता हूं, कुछ बुरा तो नहीं हुआ। (कहते-कहते सहसा वहीं पर पड़ी हुई चौकी पर बैठ जाता है) यहां बड़ी शान्ति है। सचमुच मुझे लगता है जैसे सर पर से कोई बड़ा बोझ उतर गया है। बहुत अच्छा लगता है मन को। जितना चाहूं उतनी दूर तक उड़ सकता हूं। सोचता हूं अब कुछ देर सो लिया जाए।

स्त्री : (हतप्रभ) तुम सोना चाहते हो। कुल की नाक कट गई और तुम्हें नींद आ रही है। क्या तुम उसके पास नहीं जाओगे?

देवीप्रसाद : जाऊंगा, लेकिन आज नहीं। आज तो मुझे बड़े जोर की नींद आ रही है (नाक को छूकर) और

मेरी नाक भी अभी सही-सलामत है।

(आंखें मींच लेता है और तुरन्त खर्राटे भरने लगता है। स्त्री पागल-सी उसे देखती है। सूत्रधार बड़े जोर से हंसता है।)

सूत्रधार : खूब! नाटक के इस अन्त की तो मैंने कल्पना भी नहीं की थी। अब लगता है, सचमुच ही क्रान्ति द्वार खटखटा रही है। (स्त्री से) इन्हें सोने दीजिए। बेचारे जैसे वर्षों से न सोए हों। आइए हम लोग चलें। (स्त्री झिझकती है) आइए न, यहां इन्हें कोई परेशान नहीं करेगा।

(स्त्री चित्र-लिखित-सी पीछे-पीछे मंच से बाहर चली जाती है। तभी अन्दर से एक-एक करके सभी पात्र मंच पर आ जाते हैं। वे अचरज से सोते हुए देवीप्रसाद को देखते हैं।)

एक पात्र : यह कौन है?

दूसरा पात्र : यह भी शायद इस नाटक का कोई पात्र ही है। पर हमारी इस स्क्रिप्ट में तो इसकी कोई चर्चा नहीं है। नाटक के अन्त के बारे में अभी लेखक के साथ विचार करना है। (सूत्रधार का प्रवेश)

सूत्रधार : लेकिन अब उसकी कोई जरूरत नहीं। इन्हें वास्तविक जीवन का एक पात्र मिल गया है। तुम्हारा क्या ख्याल है? इसने दाहिना [illegible]

सकता है किसी नाटक का ? परदा यहीं गिरा दो।

(सब लोग हंसते-हंसते सिर हिलाते हैं। परदा गिरने को होता है। उसी क्षण देवीप्रसाद यंत्रवत् उठ बैठता है।)

देवीप्रसाद : (नींद में है) नहीं-नहीं ! यह नहीं हो सकता। मैं इसी क्षण उसके पास जाऊंगा। मैं उसका पिता हूं। उसे मुझसे पूछे बिना विवाह करने का अधिकार नहीं। यौवन तो अल्हड़ होता है और आसानी से पथ-भ्रष्ट किया जा सकता है। मैं यह कैसे देखता रह सकता हूं ! मैं उसे अभी लेकर आऊंगा। मुझे समाज में रहना है और'''

(यंत्रवत् बिना किसी ओर देखे नींद में ही बाहर की ओर बढ़ता है। सब आश्चर्य से उसे देखते हैं।)

एक पात्र : अन्त अब हुआ है। ऐसा अन्त जो कभी संघर्ष को समाप्त नहीं होने देगा।

(सब उसी तरह खड़े-खड़े चकित भाव से देखते रहते हैं। परदा गिर जाता है।)

० ० ०